प्रकरण चौंतीस

जेट-युगीन परिव्राजकाचार्य

मई, १९७१

श्रील प्रभुपाद ने व्यापक विश्व-भ्रमण की तैयारी की। यद्यपि उनकी भ्रमण-स्थल सूची अनिश्चित थी, किन्तु उनकी सामान्य योजना यह थी कि वे कुछ महीने विस्तृत भ्रमण करेंगे, तब संयुक्त राज्य की यात्रा करेंगे, लंदन जायेंगे और तत्पश्चात् भारत वापस आयेंगे। वे अपने शिष्यों को आस्ट्रेलिया और मलेशिया भेज चुके थे, और वे वहाँ स्वयं जाना चाहते थे। वे मोस्को भी जाना चाहते थे और सोवियत सरकार से अनुमति-पत्र की प्रतीक्षा कर रहे थे। चूँकि वे अपने आन्दोलन का प्रसार अमेरिका में कर चुके थे, उसके बड़े नगरों में जाकर और वहाँ प्रचार करके तथा उसके बाद, कार्य आगे बढ़ाने के लिए अपने कुछ विश्वासपात्र शिष्यों को उन नगरों में रख चुके थे, इसलिए अब वे अपने क्षेत्र का विस्तार करके उसमें समस्त विश्व को लाना चाहते थे।

श्रील प्रभुपाद सतत भ्रमण-शील भक्त नारद मुनि जैसे मनोभाव के साथ भ्रमण करते थे। *श्रीमद्भागवत* के प्रथम स्कन्ध में श्रील प्रभुपाद ने नारद मुनि के शब्दों का रूपान्तर दिया था :

> मैं पूर्ण संतोष के साथ और बिना किसी घमंड या ईर्ष्या के पूरे विश्व में भ्रमण करता रहा हूँ।... परम शक्तिमान विष्णु की कृपा से मैं सर्वत्र पहुँचता हूँ, चाहे वह दिव्य लोक हो या भौतिक संसार के तीनों लोक हों। मेरे मार्ग में कोई बाधा नहीं आती, क्योंकि भगवान् की भक्ति में मैं निरन्तर अटल हूँ। भगवान् कृष्ण द्वारा प्रदत्त और दिव्य ध्वनि से समन्वित अपनी वीणा बजाता हुआ, और श्री भगवान् के दिव्य सन्देश का निरन्तर गुण-गान करता हुआ मैं उपर्युक्त विधि से सदा विचरण करता रहता हूँ।

और *भागवत* के अपने तात्पर्यों में श्रील प्रभुपाद ने व्याख्या की थी,

> भिक्षु का यह कर्तव्य है कि वह परिव्राजकाचार्य के रूप में भगवान् की सृष्टि के सभी प्रकारों का अनुभव प्राप्त करे, उसे अकेले ही सभी वनों, पर्वतों, नगरों, गाँवों आदि का भ्रमण करना चाहिए, जिससे वह भगवान् में श्रद्धा और मनोबल प्राप्त कर सके और साथ ही वहाँ के निवासियों को भगवान् के सन्देश से प्रबुद्ध बना सके। एक संन्यासी कर्तव्य-बद्ध है कि वह निर्भय रहकर ऐसे खतरे उठाए; आधुनिक युग के सर्वाधिक विशिष्ट संन्यासी भगवान् चैतन्य हैं, जिन्होंने इसी तरह मध्य भारत के जंगलों में भ्रमण किया और सिंहों, रीछों, सर्पों, हिरनों, हाथियों और इस तरह के अन्य वन्य पशुओं तक को प्रबुद्ध बनाया।

प्रभुपाद ने बताया था कि कलियुग में संन्यास विशेष रूप से कठिन है। पर यदि कोई संन्यास लेता है,

> तो उसे नारद या भगवान् चैतन्य जैसे परिव्राजकाचार्यों का अनुकरण नहीं करना चाहिए, वरन् उसे किसी पवित्र स्थान में बैठना चाहिए और अपने समय और सारी शक्ति को वृन्दावन के छह गोस्वामियों जैसे महान् आचार्यों द्वारा रचित पवित्र धर्मग्रंथों के बार-बार श्रवण और पारायण में लगाना चाहिए।

फिर भी प्रभुपाद एक भिक्षु प्रचारक और परिव्राजकाचार्य की भाँति भ्रमण कर रहे थे। उस उच्च स्तर को प्राप्त करके, जहाँ पहुँचकर शुद्ध भक्त वृन्दावन में निवास करता है और निरन्तर हरे कृष्ण भजता है, वे अब समस्त संसार के कल्याण के लिए भ्रमण कर रहे थे। नारद मुनि की भाँति वे संसार के सभी भागों में जा रहे थे। जैसाकि भारत के एक संवाददाता ने उचित ही कहा था, वे जेट-युगीन परिव्राजकाचार्य थे।

• • •

कुछ थोड़े-से ब्रह्मचारी, जिनमें से हर एक श्रील प्रभुपाद द्वारा हाल में ही दीक्षित किया गया था, कई महीनों से मलेशिया के उष्णकटिबंधी प्रायद्वीप में अकेले प्रचार करते आ रहे थे। मलेशिया में लगभग दस लाख भारतीयों के होने से, जिनमें से बहुत-से सम्पत्तिशाली और प्रभावशाली थे, ब्रह्मचारियों को सफलता हो रही थी। कौला लम्पूर के एक हिन्दू मन्दिर में एक कार्यक्रम के मध्य एक दक्षिण भारतीय डॉक्टर और उसकी वकील पत्नी ने भक्तों के कार्य की प्रशंसा की और इस्कान के लिए एक मकान और कुछ जमीन अनुदान करने की तत्परता प्रकट की। जब भक्तों ने जायदाद का अवलोकन किया

और पाया कि अनुदान की तत्परता के पीछे सच्चाई थी, तो उन्होंने प्रभुपाद को सूचित किया और प्रभुपाद ने वहाँ जाने का निश्चय किया।

अपने शिष्य वेगवान को साथ लेकर प्रभुपाद वायुयान द्वारा बम्बई से कौला लम्पूर पहुँचे। चूँकि उनकी योजना इसके बाद सिडनी जाने की और वहाँ के नये मन्दिर में राधा-कृष्ण अर्चाविग्रहों को स्थापित करने की थी, इसलिए वे अपने साथ अर्चाविग्रहों को ले गये; ये वही अर्चाविग्रह थे, जिनका अभिषेक बम्बई के पंडाल में हुआ था। भगवान् कृष्ण एक लकड़ी के बक्स में वायुयान के सामान-कक्ष में थे और कपड़े में लपेटी श्रीमती राधारानी वेगवान की गोद में आराम से रखी थीं।

कौला लम्पूर में पहुँचने के थोड़े समय के अन्दर, प्रभुपाद अपने मेजबान के घर पर एक बड़ी श्रोता-मंडली के सामने बोले :

> मुझे आपको सूचित करते हुए प्रसन्नता है कि हम अभी थोड़ी देर पहले मलेशिया पहुँचे। और हमारे पहुँचने पर एक अच्छी सभा हुई और तत्पश्चात् हम नगर के बाहर आये हैं। कल मैं दिन-भर बहुत व्यस्त रहा।

प्रभुपाद दो दिन कौला लम्पूर के एक धनी सिन्धी व्यवसायी के घर में रहे। घर बहुत बड़ा और खूब विलास-युक्त था। उसमें मोटे गलीचे बिछे थे और बड़े-बड़े शीशे लगे थे। किन्तु जब प्रभुपाद को मालूम हुआ कि उनके मेजबान मांस-भक्षी थे, तो उन्होंने फल और दूध के अतिरिक्त कुछ भी खाने से इनकार कर दिया, यद्यपि उनके शिष्य उनके लिए भोजन बनाने को तैयार थे। सारे मलेशिया में भ्रमण करने के बाद उनके शिष्य मांस-भक्षियों के घरों में भोजन करना अनुज्ञेय मानते थे, यदि वे ऐसे पात्रों में अपना प्रसाद स्वयं तैयार कर सकें, जिनमें मांस न पकाया गया हो। लेकिन प्रभुपाद का स्तर उनसे ऊँचा था।

मकान के एक कमरे में संगमरमर की मूर्तियों का एक बड़ा संग्रह था, जिनमें लक्ष्मी-नारायण और राधा-कृष्ण के पचास जोड़े पंक्तियों में रखे थे। किन्तु उनसे पूजा की अपेक्षा एक संग्रहकर्ता की प्रदर्शनी का आभास होता था, और प्रभुपाद पर उनका कोई असर नहीं हुआ।

प्रभुपाद ने कौला लम्पूर के टाउन हाल और लक्ष्मी-नारारण मन्दिर में अधिकतर भारतीयों के सामने व्याख्यान दिए। उन्होंने समझाया कि लोगों में एकता की स्थापना केवल आध्यात्मिक मंच पर हो सकती है। "संयुक्त राष्ट्र को देखो," उन्होंने कहा, "वे झंडों की संख्या में वृद्धि करते जा रहे हैं। और उनके साथ युद्धों में अधिकाधिक वृद्धि हो रही है। हमारा यह कृष्णभावनामृत वास्तविक संयुक्त राष्ट्र होगा।" प्रभुपाद अपने साथ

इस्कान के कार्यकलापों की स्लाइड ले आये थे, और उन्होंने एक स्लाइड दिखवाया और एक शिष्य से उसका वर्णन करवाया; वे बताते जाते थे कि उसे क्या कहना था। जब लंदन के ट्रैफाल्गर स्क्वायर में रथयात्रा का एक स्लाइड दिखाया गया, तो प्रभुपाद ने अपने उस भक्त को यह कहने को अनुप्रेरित किया कि, "अब यह लार्ड नेल्सन नहीं है, ये भगवान् जगन्नाथ हैं।"

जब प्रभुपाद की भेंट उस दम्पत्ति से हुई, जो भूमि देने को तैयार था, तो उन्होंने पाया कि अनुबंध में कई महत्त्वपूर्ण शर्त्तें थीं। डॉक्टर और उसकी पत्नी का कहना था कि वे इस्कान को मुख्य राष्ट्रीय मार्ग की बगल में जमीन का एक बड़ा टुकड़ा देने को तैयार थे और उनकी निर्माण इस्कान स्वयं मन्दिर का निर्माण करेगा। किन्तु यदि दो साल के अन्दर इस्कान मन्दिर का भवन तैयार न कर सका, तो डॉक्टर और उसकी पत्नी जायदाद वापस ले लेंगे। प्रभुपाद भूमि का अनुदान स्वीकार करने पर विचार करने को सदैव उत्सुक रहते थे, इसलिए उन्होंने शर्त-सहित मिलने वाला यह अनुदान स्वीकार कर लिया। लेकिन वे जानते थे कि ऐसे अनुदान प्राय: कठोर शर्तों से जकड़े होते थे। डॉक्टर और उसकी पत्नी से पहले ही संकेत मिल चुके थे कि मन्दिर का संचालन 'भारतीय ब्राह्मण' करेंगे और इस्कान को केवल एक पार्श्व वेदिका मिलेगी।

एक दिन संध्या-समय जब प्रभुपाद डॉक्टर से, जो स्त्री रोग विशेषज्ञ था, बात कर रहे थे तो संतति-निग्रह की चर्चा आई। प्रभुपाद ने उसमें निहित पाप की व्याख्या की और एक दृष्टान्त दिया। यदि कोई उस कमरे की हवा दूषित कर दे जिसमें डॉक्टर और वे बैठे थे, तो या तो उन्हें कमरा छोड़ना पड़ेगा या वे मर जायेंगे। उसी तरह, प्रभुपाद ने समझाया कि गर्भनिरोध का तात्पर्य गर्भाशय को विषाक्त बनाना है, और किसी आत्मा को उसके अधिकारपूर्ण शरण-स्थल से वंचित करना है।

प्रभुपाद के पहले मेजबान की तरह डॉक्टर भी मांस खाता था, यद्यपि भक्तजन दबाव डालते रहे थे कि वह मांस खाना छोड़ दे, लेकिन प्रभुपाद उदार थे। "मांस खाना बन्द करने की कोशिश कीजिए," उन्होंने बल दिया। एकादशी का दिन था और प्रभुपाद ने उपवास का निश्चय किया। इस तरह उन्होंने एक मांस-भक्षी व्यक्ति के घर में कुछ खाने के प्रति घोर अनिच्छा का प्रदर्शन किया।

• • •

सिडनी
मई ९, १९७१

सिडनी के भक्त प्रभुपाद के लिए तैयार नहीं थे। एक पहले के तार से उनको सूचित

किया गया था कि प्रभुपाद आ रहे थे, लेकिन बाद के एक तार से सूचना मिली थी कि, "अब प्रभुपाद नहीं आ रहे थे।" एक तीसरा तार मिला था जिसमें खबर थी कि आस्ट्रेलिया के जी. बी. सी. सचिव, बलिमर्दन आ रहे थे। जब एक चौथे तार में केवल तिथि और उड़ान नम्बर के साथ यह सूचना आई कि, "आ रहे हैं," तो भक्तों ने मान लिया था कि इसमें बलिमर्दन के आने का निर्देश था, प्रभुपाद का नहीं। भक्तों ने एक छोटी-सी माला ली और वे हवाई अड्डे पर गये। और जब सीमा-शुल्क-क्षेत्र के द्वार उन्मुक्त हुए और प्रभुपाद स्वयं बाहर निकले तो भक्त हक्का-बक्का रह गये।

बाएं हाथ में एक सफेद अटैची, दाएं में एक छड़ी लिए और कंधों पर एक हल्की चादर लपेटे हुए प्रभुपाद हवाई अड्डे में प्रविष्ट हुए। संवाददाता, जो बलिमर्दन से मुलाकात करने आये थे, उत्सुकतापूर्वक आगे बढ़े और उनमें से एक ने पूछा कि प्रभुपाद आस्ट्रेलिया कैसे पहुँच गये थे।

धीमे स्वर में प्रभुपाद ने उत्तर दिया कि वे सर्वत्र जाते थे, जैसे एक विक्रेता सर्वत्र पहुँचता है। एक विक्रेता को खरीददारों की तलाश रहती है, वे जहाँ भी मिल जाये। और प्रभुपाद उन लोगों की तलाश में यात्रा कर रहे थे, जो इतने बुद्धिमान हों कि उनके सन्देश को स्वीकार कर लें। "आस्ट्रेलिया आने में कोई अन्तर नहीं पड़ता," उन्होंने कहा, "सरकारों ने सीमांकन कर रखा है—'यह आस्ट्रेलिया है।' किन्तु हमें सर्वत्र कृष्ण की भूमि दिखाई देती है।"

एक भक्त ने शीघ्रतापूर्वक जाकर मन्दिर को फोन किया—प्रभुपाद आ गये हैं!

• • •

२६ सेकंड एवन्यू, न्यूयार्क के प्रभुपाद के आदि मन्दिर की भाँति सिडनी का मन्दिर भी एक प्रमुख व्यावसायिक मार्ग पर, एक एक-कक्षीय स्टोरफ्रंट में स्थित था। स्टोरफ्रंट की शीशे की खिड़की पर एक भक्त ने राधा और कृष्ण का चित्र अंकित कर दिया था। प्रभुपाद कमरे में प्रविष्ट हुए, तो उसे असज्जित पाया, अतिरिक्त इसके कि वहाँ एक साधारण लकड़ी की वेदिका थी, जिस पर तीन इंच के जगन्नाथ-अर्चाविग्रह रखे थे और कपड़े से ढका एक बड़ा-सा व्यास-आसन था। एक पुराना कालीन फर्श पर बिछा था। हवा में छाई हुई नीली धुंध, नीचे रसोई-घर से उठता हुआ धुआँ था, जहाँ एक भक्त प्रभुपाद का दोपहर का भोजन बघारने के लिए जीरा जला रहा था।

प्रभुपाद गम्भीर बने रहे, जब वे जान-बूझकर पीछे के दरवाजे तक गये और बाहर की ओर देखने लगे। किन्तु जब उन्होंने देखा कि मकान से सटकर कूड़े का ढेर लगा था और ऊँचाई तक पटरे रखे थे, तो उनकी गम्भीरता रुखाई में बदल गई। "यह सब क्या है?"

उन्होंने पूछा। किसी ने व्याख्या करने की कोशिश की। लेकिन वह असंतोषजनक रही। एक भक्त एक गिलास दूध ले आया। "बहुत गरम है।" प्रभुपाद ने कहा, और भक्त उसे वापस ले गया।

प्रभुपाद बड़े व्यास-आसन पर बैठ गये। उन्होंने कमरे में हर एक के चेहरे को देखा। लगभग पन्द्रह भक्तों में से किसी ने उन्हें पहले कभी नहीं देखा था और कुछ थोड़े-से ही दीक्षित हुए थे (डाक द्वारा)। वे अप्रशिक्षित थे। गलीचा गंदा है, प्रभुपाद ने कहा, उसके स्थान पर दूसरा बिछाना चाहिए। और वेदिका पर फूल क्यों नहीं थे? वे राधा और कृष्ण के अर्चाविग्रहों को ले आये थे, लेकिन भक्त उनकी पूजा आरम्भ कर सकें, इसके पहले हर चीज बहुत साफ होनी चाहिए। भक्तों को ब्राह्मण बनना होगा, इसके पहले कि वे राधा और कृष्ण की पूजा करें।

प्रभुपाद ने देखा कि ये भक्त कृष्णभावनामृत के विषय में अल्पज्ञ थे। उपेन्द्र और बलिमर्दन भक्त, जो प्रारम्भ में आस्ट्रेलिया आये थे, केन्द्र खोलने के पश्चात् चले गये थे और वहाँ बहुत कम वापस आते थे। इसलिए अनुभवहीन भक्तों का एक पूरा मन्दिर यों ही छोड़ दिया गया था। चूँकि सिडनी के भक्तों में से कोई अच्छा व्याख्यान नहीं दे सकता था, इसलिए प्रतिदिन की कक्षाओं में केवल प्रभुपाद की संक्षिप्त *भगवद्गीता यथारूप* से पाठ होता था। केवल यही एक पुस्तक भक्तों के पास थी। तब भी प्रभुपाद में उनके दृढ़ विश्वास से उनके प्रशिक्षण के अभाव की पूर्ति हो जाती थी। वे प्रभुपाद को शुद्ध भक्त मानते थे, जिनका भगवान् से सीधा सम्पर्क था, और उनकी पुस्तकों को वे सत्य-स्वरूप तथा कृष्ण को परम श्री भगवान् मानते थे। किन्तु बहुत-सी व्यावहारिक चीजों को वे नहीं जानते थे, जैसे भोजन बनाना, व्याख्यान देना, अर्चाविग्रहों की पूजा करना, आदि। उन्हें मालूम था कि प्रभुपाद चाहते थे कि वे सार्वजनिक रूप से हरे कृष्ण कीर्तन करें और *बैक टु गॉडहेड* पत्रिका का सिडनी की जनता में वितरण करें और वे वह कार्य नित्य प्रतिदिन करते थे। प्राय: गिरफ्तारियों के बावजूद, वे अपना संकीर्तन जारी रख रहे थे। उनमें निष्ठा थी, कमी थी तो केवल प्रशिक्षण की।

एक भक्त प्रभुपाद का दोपहर का भोजन लाया—बहुत खराब पका हुआ; चपातियाँ आधी जली हुई थीं, आधी कच्ची थीं, सब्जियों में गलत मसाला डाला गया था। प्रभुपाद ने पकाने वाले को डाँट बताई, "यदि तुम नहीं जानती थी कि भोजन कैसे बनाया जाता है, तो मुझे बताया क्यों नहीं? मैं तुम्हें सिखा सकता हूँ।" और वे रसोई-घर में गये। एक ने कचौड़ियाँ बनाने की कोशिश की थी और वह असफल रही थी। यद्यपि वह जानती थी कि आटे को महीन बेलना चाहिए, उनमें पीठी बिल्कुल ठीक भरी होनी चाहिए और फिर किनारों को ठीक-ठीक मोड़ना चाहिए, पर न तो वह और न अन्य कोई भक्त ऐसा करने

में सफल हो सका था। प्रभुपाद ने उसी आटे और पीठी से पकाने की कला का प्रदर्शन किया और अच्छी कचौड़ियाँ बनाई।

भक्तों ने चपातियाँ बनाने में अपनी कठिनाई बताई। उनके बिजली के स्टोव में लपट नहीं थी। चपातियाँ हमेशा या तो सूख जाती थीं या कच्ची रह जाती थीं या जल जाती थीं, वे फूलती कभी नहीं थीं। भक्तों के इस बहाने से प्रभुपाद को चिढ़ हुई। उन्होंने दिखाया कि बिजली के चूल्हे पर भी चपातियाँ हर बार कैसे फुलाई जा सकती थीं। तब उन्होंने रसोइयों को एक सादी सब्जी बनाने की विधि बताई; वे बनाते जाते और सिखाते जाते थे। जब वे रसोई-घर में से चले गये तो भक्तों ने चपातियाँ बनाने की फिर से कोशिश की। चपातियाँ फिर भी नहीं फूलीं। यह एक जादूगरी की कला मालूम होती थी, जिसे केवल प्रभुपाद ही जानते थे।

• • •

राधा और कृष्ण को आस्ट्रेलिया लाने के लिए प्रभुपाद के पास अपने कारण थे—जिनमें कुछ स्पष्ट थे और शेष इतने गहरे थे कि केवल वे और राधा तथा कृष्ण समझ सकते थे। इतना तो था कि प्रभुपाद अपने आन्दोलन का लगातार विस्तार कर रहे थे, जिसका एक महत्त्वपूर्ण अंग अर्चाविग्रहों की पूजा था। अत: राधा और कृष्ण को आस्ट्रेलिया लाने का यह एक कारण था : भक्तों को मजबूत बनाना और अपने आन्दोलन को वहाँ और ठोस रूप में स्थापित करना।

और प्रभुपाद को इन अर्चाविग्रहों से प्रेम था। ये अर्चाविग्रह बम्बई के पंडाल में अभिषिक्त हो चुके थे, और उसके बाद उनका सार्वजनिक प्रदर्शन नहीं हुआ था; प्रभुपाद ने उन्हें अपने कमरे में रखा था, जहाँ दिन में वे उन्हें देख सकते थे। वे बम्बई से उन्हें मलेशिया ले गये थे और फिर वहाँ से सिडनी, और अब उनका प्रस्ताव उन्हें इस्कान के विकासशील केन्द्र में स्थापित करने का था। किन्तु उनके हृदय की असीम शुद्धता और परम कृपालु श्री श्री राधा और कृष्ण के लिए कोई भी आपदा मोल लेने के लिए उनके दृढ़ निश्चय की गहराई, अथाह थी। श्रील प्रभुपाद के कार्यकलाप अत्यन्त गम्भीर थे और उनके गहरे आशय को कोई समझ नहीं सकता था। भगवान् चैतन्य के सम्बन्ध में कृष्णदास कविराज ने लिखा है, "मैं श्री चैतन्य महाप्रभु के कार्यकलापों का गहन आशय नहीं जानता, मैं केवल उनके बाहरी वर्णन का प्रयत्न कर रहा हूँ।"

जब प्रभुपाद दीक्षा-संस्कार और अर्चाविग्रहों की प्राण-प्रतिष्ठा के लिए मन्दिर में आये तो भक्त तैयार नहीं थे। लगभग खाली वेदिका का अलंकरण केवल एक छोटा-सा फूलदान कर रहा था और भक्तों ने अर्चाविग्रहों के लिए मालाएँ तैयार नहीं की थीं। प्रभुपाद

अप्रसन्न हुए। पर छोटा-सा मन्दिर लोगों से भर गया था और अतिथि तथा भक्त दरवाजों में भीड़ लगाए खड़े थे, और सामने की खिड़की से झाँक रहे थे। टी. वी. दल ने गर्म बत्तियों के प्रकाश में कार्यक्रम की फिल्म बनाई।

जब तक भक्त जल्दी में अर्चाविग्रहों के लिए मालाएँ गूथें, प्रभुपाद ने दीक्षा-संस्कार सम्पन्न कराया। सब मिलाकर पन्द्रह शिष्यों ने दीक्षा ली। कुछ भक्तों को उन्होंने पहली दीक्षा दी, कुछ को दूसरी और शेष को पहली और दूसरी, दोनों। तब उन्होंने राधा और कृष्ण के विग्रहों को प्रेमपूर्वक स्नान कराया और हवन किया। अर्चाविग्रहों को परिधान धारण कराते हुए प्रभुपाद ने टिप्पणी की कि उनके वस्त्र ठीक से नहीं बने थे और भक्तों को नये वस्त्र तुरन्त बनाने चाहिए। उन्होंने अर्चाविग्रहों को श्री श्री राधा-गोपीनाथ नाम दिया।

वैभवी : *उन्होंने मन्दिर में हर एक को दीक्षित किया, जो कोई भी वहाँ था; एक लड़के को भी जो उसी सप्ताह दाखिल हुआ था और कृष्णभावनामृत के बारे में जिसने अभी केवल एक सप्ताह पूर्व सुना था; उन लोगों को भी जो मन्दिर में नहीं रहते थे—जो कोई भी वहाँ मिल गया और किसी भी तरह की सेवा में लगा था। वे कृष्णभावनामृत को आस्ट्रेलिया में स्थापित देखना चाहते थे, इसलिए उन्होंने हर एक को दीक्षित किया। उन्होंने पहली और दूसरी दीक्षा एक साथ ही दी, क्योंकि अर्चाविग्रहों की स्थापना के बाद वहाँ कुछ ब्राह्मणों का होना जरूरी था।*

लेकिन हम कुछ नहीं जानते थे। हम तैयार तक नहीं थे। वेदिका पूरी तरह नहीं बनी थी। प्रभुपाद ने मुझे बताया कि हमें फूलों को गूँथकर एक माला बनानी चाहिए थी—अर्चाविग्रह को माला पहनाई जाती है। मैं सड़क में इधर-उधर भागती फिर रही थी कि कुछ फूल और धागा मिल जायें, जिससे माला बन सके।

यज्ञोपवीत के साथ भी वही बात थी। यज्ञोपवीत उपलब्ध नहीं थे। ब्राह्मण-दीक्षा के समय प्रभुपाद ने पुरुषों को एक पवित्र धागा दिया, लेकिन कोई नहीं जानता था कि यह क्या था। अतः मुझे भागकर कुछ धागे लाने पड़े। और जब प्रभुपाद लोगों को दीक्षा दे रहे थे, तो मैं पास बैठी यज्ञोपवीत बना रही थी—उस यज्ञोपवीत की नकल करती हुई जिसे बलिमर्दन ने अपने शरीर पर से उतार दिया था।

मैंने पाँच यज्ञोपवीत बनाए और तब मेरी बारी आ गई। हवन हो जाने पर जब मैं प्रभुपाद के कमरे से बाहर आई, जिसमें उन्होंने मुझे गायत्री मंत्र दिया था, तो दूसरे भक्तों ने कहा, "अब तुम एक ब्राह्मण हो। इसलिए तुम्हें भी एक यज्ञोपवीत धारण करना है।" उन्होंने कहा कि मैं अपने लिए भी एक यज्ञोपवीत बनाऊँ, पर मैंने ऐसा नहीं किया, क्योंकि किसी ने मुझे बाद में बताया कि स्त्री यज्ञोपवीत नहीं पहनती। हमें कुछ अधिक मालूम नहीं था।

सिडनी ग्रामर स्कूल में, जो अभिजात लड़कों का स्कूल था, प्रभुपाद अपने शिष्यों और छात्रों के एक दल का कीर्तन-जुलूस बनाकर स्कूल के अहाते में गये। लगभग दो सौ लड़कों और कई अध्यापकों ने उसमें भाग लिया। कुछ लड़के खिलवाड़ कर रहे थे और हँस रहे थे, कुछ मंत्र गा रहे थे, कुछ गम्भीरतापूर्वक जुलूस में चल रहे थे। अध्यापक मुसकरा रहे थे और देख रहे थे। जुलूस एक बड़े कमरे में समाप्त हुआ, जिसमें सामने की ओर एक पंक्ति में कुर्सियाँ रखी थीं। प्रभुपाद हेडमास्टर के सिंहासन की भाँति अलंकरण-युक्त कुर्सी पर मध्य में बैठे और हरे कृष्ण कीर्तन करते हुए करताल बजाने लगे। केवल थोड़े से लड़कों को अनुकरण करते देखकर, वे रुक गये और उन्होंने अपने सामने बैठे लड़कों की ओर देखा।

"तुम सभी सुन्दर लड़के हो। तुम हरे कृष्ण गाने में हमारा साथ क्यों नहीं देते? क्या यह बहुत कठिन है? क्या तुम कीर्तन करने की कोशिश नहीं करोगे? कहो—ह-रे।"

कुछ बच्चे : "हरे।"

प्रभुपाद : "सब कहो, हरे।"

बच्चे, मंद स्वर में, "हरे," कुछ हीं-हीं करते हैं।

प्रभुपाद ने उनसे मंत्र कहलवाया, एक बार में एक-एक शब्द कहलवाकर। तब भी कुछ बच्चे मौन थे।

प्रभुपाद : "केवल तीन शब्द कहने हैं। हरे, कृष्ण और राम। क्या यह बहुत कठिन है? फिर कहो—हरे।"

बच्चे : "हरे।"

बच्चों को चिढ़ाते और उकसाते हुए प्रभुपाद उन्हें आगे बढ़ाते रहे। "ओह! तुम गा नहीं सकते? तुम गूंगे हो?" बच्चे हँस पड़े। "यह क्या है? तुम तीन शब्द नहीं कह सकते? ओह, यह बहुत आश्चर्यजनक है। गाओ—हरे।"

"हरे।"

"कृष्ण।"

"कृष्ण।"

प्रभुपाद ताल के साथ अपनी करताल बजाने लगे। बच्चे उनका अनुकरण करने लगे, जब प्रभुपाद गाने लगे : हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे/ हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे।

कुछ समय बाद प्रभुपाद ने करताल बजाना बन्द कर दिया। अलंकृत कुर्सी में बैठे हुए वे बच्चों की ओर देखकर मुसकराने लगे। "तीन शब्द : हरे, कृष्ण और राम। क्या तुम जानते हो कि भगवान् क्या हैं? क्या तुम में से कोई खड़ा होकर मुझे बता सकता है कि

भगवान् क्या हैं?"

बच्चे मौन थे, तब फुसफुसाहट हुई। अन्त में एक बारह वर्ष का लड़का खड़ा हुआ। उसके साथियों ने करतल-ध्वनि की और वे हँसने लगे।

"ओह, धन्यवाद।" प्रभुपाद बोले, "यहाँ आओ।"

लड़का उनके पास गया।

"क्या तुम जानते हो कि भगवान् क्या हैं?" प्रभुपाद ने पूछा।

"हाँ," लड़के ने उत्तर दिया। "भगवान् आत्म-साक्षात्कार हैं, और भगवान् अचेतन मन में मिलता है।"

"धन्यवाद।"

बच्चों ने फिर करतल-ध्वनि की।

"नहीं, रुको, जाओ मत।" प्रभुपाद बोले, "अब तुम्हें बताना है कि तुम्हारा मतलब क्या है। आत्म-साक्षात्कार क्या है?"

लड़का : "यह अचेतन मन की शक्तियों को उद्‌गारना और अपने आपको देखना है..."

प्रभुपाद : "क्या तुम सोचते हो कि मन अचेतन है?"

लड़का : "मन अचेतन है।"

प्रभुपाद : "अचेतन को समझने के लिए तुम्हें जानना है कि चेतना क्या है।"

लड़का : "मैं चेतना के सम्बन्ध में नहीं कह रहा हूँ—अचेतन के सम्बन्ध में।"

प्रभुपाद : "जब तक तुम चेतना के बारे में न जानो, तब तक अचेतन का वर्णन कैसे कर सकते हो?"

लड़का : "अचेतन।"

प्रभुपाद : "अचेतन चेतना का नकारात्मक पक्ष है। इसलिए तुम्हें बताना चाहिए कि चेतना क्या है। तब हम समझ सकते हैं कि अचेतन क्या है।

लड़का : "चेतना?"

प्रभुपाद : "हाँ, समझने की कोशिश करो कि चेतना क्या है? तब तुम समझ सकोगे कि अचेतन क्या है। चेतना का प्रसार सारे शरीर में है। मान लो कि मैं तुम्हारे शरीर के किसी भाग में चिकोटी काटता हूँ। तुम्हें कुछ दुख मालूम होता है। यही चेतना है। दुख और सुख की यही अनुभूति चेतना है। किन्तु यह चेतना व्यष्टिगत है। मैं तुम्हारे शरीर के दुखों और सुखों का अनुभव नहीं कर सकता, न ही तुम मेरे शरीर के दुखों और सुखों का अनुभव कर सकते हो। इसलिए तुम्हारी चेतना तुम्हारी अपनी है और मेरी चेतना मेरी अपनी है। परन्तु एक दूसरी चेतना भी है, जो तुम्हारे शरीर के दुखों और सुखों का अनुभव

कर सकती है और मेरे शरीर के दुखों और सुखों का भी अनुभव कर सकती है। उस चेतना का वर्णन *भगवद्गीता* में है।"

"तुमने *भगवद्गीता* का नाम सुना है ? तुम ? तुम में से कोई ?"

एक अन्य लड़का : "हाँ।"

प्रभुपाद : "कौन कहता है 'हाँ?' यहाँ आओ। धन्यवाद। बहुत अच्छा। तुम में से कम-से-कम एक जानता है कि *भगवद्गीता* क्या है। *भगवद्गीता* में कहा गया है कि..." और आगे प्रभुपाद ने भौतिक शरीर और आत्मा में तथा व्यष्टि आत्माओं और परम-आत्मा कृष्ण में जो अन्तर है, उसे समझाया।

"तुम अपने शरीर के व्यष्टि ज्ञाता हो। मैं अपने शरीर का व्यष्टि ज्ञाता हूँ। इस तरह हर एक अपने निजी शरीर का व्यष्टि ज्ञाता है। किन्तु एक अन्य व्यक्ति है, जो कहता है, 'मैं हर व्यक्ति के शरीर के बारे में हर चीज जानता हूँ।' जैसे मैं अपने शरीर के बारे में थोड़ा-बहुत जानता हूँ, या इस संसार के बारे में थोड़ा-बहुत जानता हूँ, उसी तरह एक दूसरा आत्मा, परम-आत्मा है, जो इस जगत के बारे में सब कुछ जानता है। उन्हें कभी कभी भगवान् परमात्मा या कृष्ण कहते हैं या भाषानुसार भिन्न भिन्न नाम दिए जाते हैं।

कृष्ण के शाश्वत सेवक के रूप में आत्मा के उनसे घनिष्ठ सम्बन्ध का और उस सम्बन्ध को भूलने के परिणाम स्वरूप आत्मा के दुख का वर्णन करते हुए प्रभुपाद ने अपने व्याख्यान का अन्त किया।

"इन शिक्षाओं को हर स्कूल और कालेज में प्रवेश मिलना चाहिए, जिससे बच्चे आरम्भ से ही समझ सकें कि भगवान् क्या हैं, वे कितने महान् हैं और हम उनसे कैसे सम्बन्धित हैं और हमें कैसे रहना है।

तो, हमारा आन्दोलन, कृष्णभावनामृत यही सिखाता है। यह मत समझो कि यह कोई सम्प्रदायवादी धर्म है। हम लोगों को ईश्वर-चेतनायुक्त बना रहे हैं। इससे कोई अन्तर नहीं आता कि आप किस धर्म को मानने वाले हैं। यदि किसी धर्म के सिद्धान्तों का पालन करके कोई ईश्वरभावनामृत में आगे बढ़ता है, तो वह प्रथम श्रेणी का धर्म है। यही हमारा उद्देश्य है, और इसी का प्रचार हम संसार-भर में कर रहे हैं।"

"अत: हम आपके यहाँ उपस्थित अध्यापकों से प्रार्थना करते हैं कि वे छात्रों को आरम्भ से ही ईश्वरभावनाभावित बनाएँ। तब उनका भविष्य शान्तिपूर्ण, समृद्ध और आशापूर्ण होगा। बहुत-बहुत धन्यवाद। हरे कृष्ण।"

• • •

प्रभुपाद वेसाइड चैपल में भी बोलने को राजी हो गये, जो सिडनी के निचले भाग में

नशीली दवाओं के व्यसनियों और वेश्याओं की सेवा का केन्द्र था। वेसाइड का एक संचालक प्रभुपाद से मन्दिर में मिला और उन्हें चैपल ले गया। संचालक, जो लम्बे बालों और हिप्पी के पहनावे वाला नवयुवक था, डींग मारने लगा कि वेसाइड चैपल किस तरह मादक द्रव्यों के व्यसनियों की सेवा कर रहा था। पर प्रभुपाद ने यह समझा कि वह कह रहा था कि चैपल व्यसनियों को मादक दवाएँ पहुँचाता है।

वेसाइड चैपल में एक शंकालु ने प्रभुपाद को चुनौती दी। प्रभुपाद ने समझाया था कि भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन ही लोगों की सहायता का एकमात्र वास्तविक मार्ग था, किन्तु दोषदर्शी ने ललकार बताई, "हरे कृष्ण कीर्तन से वास्तव में क्या लाभ है?"

"यह आपको मृत्यु से बचाता है!" प्रभुपाद ने जोरदार शब्दों में उत्तर दिया।"

• • •

मई १२, १९७१

सिडनी के अपने आवास में प्रभुपाद ने अपने आगामी संस्करण *भगवद्गीता यथारूप* की प्रस्तावना लिखी। मैकमिलन कम्पनी अब उसकी पूर्ण पाण्डुलिपि प्रकाशित करने को राजी हो गई थी। अनुबंध पर हस्ताक्षर हो गये थे, पुस्तक मुद्रण के लिए तैयार की जा रही थी; केवल प्रस्तावना लिखनी बाकी थी।

प्रभुपाद ने अपनी प्रस्तावना में लिखा कि यद्यपि अमेरिका में कृष्णभावनामृत आन्दोलन आरम्भ करने के लिए उनका नाम लिया जाता है, पर वास्तव में, "आन्दोलन के मौलिक जन्मदाता स्वयं भगवान् कृष्ण हैं।" अपनी उपलब्धियों का सारा श्रेय अपने गुरु महाराज को देते हुए प्रभुपाद ने कहा कि उनकी अपनी एकमात्र विशेषता यह थी कि उन्होंने *भगवद्गीता यथारूप* बिना किसी मिलावट के प्रस्तुत करने का प्रयास किया था।

> अपनी निजी इन्द्रियों को सन्तुष्ट करने के स्थान पर व्यक्ति को भगवान् की इन्द्रियों को सन्तुष्ट करना है, यही जीवन की चरम पूर्णता है। भगवान् इसे चाहते हैं और वे इसकी माँग करते हैं। हर एक को *भगवद्गीता* के इस केन्द्रीय मर्म को समझना है। हमारा कृष्णभावनामृत आन्दोलन समस्त संसार को यह केन्द्रीय मर्म सिखा रहा है और चूँकि हम *भगवद्गीता यथारूप* के कथ्य को विकृत नहीं कर रहे हैं, इसलिए जो कोई भी *भगवद्गीता* के अनुशीलन से लाभ उठाने में रुचि रखता है, उसे *भगवद्गीता* का व्यावहारिक आशय समझने के लिए भगवान् के सीधे निर्देशन में कृष्णभावनामृत आन्दोलन से सहायता लेनी चाहिए। इसलिए हमें आशा है कि लोग *भगवद्गीता यथारूप* के अनुशीलन से अधिकाधिक लाभ उठाएँगे,

जैसाकि हमने उसे यहाँ प्रस्तुत किया है। और यदि एक व्यक्ति भी भगवान् का सच्चा भक्त बन जाता है, तो हम अपने प्रयास को सफल मानेंगे।

जैसाकि प्रभुपाद ने अपनी प्रस्तावना में स्पष्ट किया, वे *गीता* की पूर्ण पाण्डुलिपि का प्रकाशन "कृष्णभावनामृत को अधिक ठोस और प्रगतिकारक ढंग से स्थापित करने के लिए" कर रहे थे। वे यह कार्य *भगवद्गीता* जैसे दिव्य साहित्य को प्रस्तुत करके करना चाहते थे। किन्तु, जैसाकि भगवान् चैतन्य ने कहा था, उन्हें "हर नगर, हर गाँव" में भी जाना होगा—स्वयं व्यक्तिगत रूप में, या अपने एजेंटों, अर्थात् शिष्यों के माध्यम से। और वे जहाँ भी जायें, उन्हें *भगवद्गीता* का प्रचार करना होगा—उसके श्रोता जो कोई भी हों।

अगले दिन प्रभुपाद को कलकत्ता में एक विशाल पंडाल-उत्सव के लिए आस्ट्रेलिया से विदा होना था, फिर वहाँ से मास्को, पेरिस, लास ऐंजिलेस... जाना था।

भगवान् कृष्ण ने *भगवद्गीता* में कहा है कि जो अन्य भक्तों को *भगवद्गीता* की शिक्षा देता है, उन्हें उससे अधिक प्रिय सेवक कोई नहीं है। और प्रभुपाद अपने सारे कार्यकलापों में—चाहे वे कोई प्रस्तावना लिख रहे हों, वेश्याओं और मादक द्रव्य व्यसनियों को व्याख्यान दे रहे हों, किसी शिष्य को बिना जलाए चपाती बनाना सिखा रहे हों, या भविष्य के लिए महान् योजनाएँ बना रहे हों—सदैव *भगवद्गीता* की शिक्षा दे रहे थे, और इसलिए वे भगवान् कृष्ण के सबसे प्रिय सेवक थे।

• • •

प्रभुपाद राधा-गोपीनाथ श्रीविग्रहों के सामने हाथ जोड़े खड़े थे। सिडनी में एक सप्ताह से भी कम रहने के बाद वे उसे छोड़ रहे थे। वे जानते थे कि यहाँ के भक्त राधा-कृष्ण की उपासना के लिए अपेक्षित स्तर से नीचे थे। और वे जानते थे कि नवदीक्षित शिष्यों को उनकी उपासना का कार्य सौंपकर वे एक खतरा मोल ले रहे थे। तो भी एक अधिकृत, आचार्य और भगवान् चैतन्य के प्रतिनिधि के रूप में उन्हें कृष्णभावनामृत के पौधे को जहाँ कहीं भी वह जड़ पकड़ सके, रोपना था। संसार को उसकी घोर आवश्यकता थी। यदि प्रभुपाद के शिष्य कीर्तन, श्रवण, विधि-विधानों के पालन आदि में उनके बताए नियमों का निर्वाह करेंगे, तो प्रभुपाद को विश्वास था कि शीघ्र ही वे पवित्र बन जायेंगे।

उन्होंने एक दृष्टान्त दिया था : यद्यपि सांसारिक जीवन में न्यायाधीश के आसन पर बैठने के पहले एक व्यक्ति को बहुत योग्य वकील बनना जरूरी है, किन्तु कृष्णभावनामृत में एक निष्ठावान् भक्त को पहले 'एक बेंच पर बैठकर' ब्राह्मण बनने दिया जाता है और

बाद में पवित्र नाम और गुरु के अनुग्रह से वह योग्य बन जाता है। पर सिडनी के भक्त विशेष तौर से अपक्व थे और प्रभुपाद ने राधा-गोपीनाथ से एक असामान्य याचना की, "अब मैं आपको म्लेच्छों के हाथों में छोड़कर जा रहा हूँ। मैं इसकी जिम्मेदारी नहीं ले सकता। कृपा करके इन लड़कों और लड़कियों का मार्गदर्शन करना और उन्हें बुद्धि देना जिससे वे भलीभाँति आपकी पूजा कर सकें।"

• • •

कलकत्ता
मई १३, १९७१

दस दिवसीय कलकत्ता पंडाल-उत्सव के लिए प्रभुपाद ठीक समय पर पहुँचे। उनके आदेश पर गिरिराज और तमाल कृष्ण उत्सव का आयोजन करने के लिए आ गये थे, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने बम्बई में किया था। प्रभुपाद ने कलकत्ता इस्कान के अध्यक्ष, जयपताक स्वामी, को लिखा था,

> यदि संकीर्तन उत्सव के पंडाल में एक बड़े रसोई-घर की व्यवस्था की जा सके, तो हम प्रसाद का वितरण प्रतिदिन करेंगे। व्यवस्था करने की कोशिश करना। पूड़ी, हलवा, खिचड़ी—जिस चीज का भी और जितने का भी प्रबन्ध हो सके। तमाल कृष्ण और गिरिराज के पास इस सम्बन्ध में सभी विचार हैं।

उपस्थिति बम्बई पंडाल से भी बढ़ गई। प्रतिदिन सांसद-मंत्रियों और अन्य प्रतिष्ठित वक्ताओं को मिलाकर बीस से तीस हजार तक लोग आते थे। कलकत्ता में इतना बड़ा धार्मिक समारोह पहले कभी नहीं हुआ था; सारा नगर हरे कृष्ण आन्दोलन की शक्ति से परिचित हो गया।

तीसरे पहर के आरम्भ से भक्त एक स्टाल से प्रभुपाद की पुस्तकों की बिक्री शुरू कर देते थे, मंच पर कीर्तन होने लगता था और जन-समूह को प्रसाद बँटने लगता था। शाम को साढ़े छह बजे के आसपास भावपूर्ण लम्बे कीर्तन के साथ संध्याकालीन कार्यक्रम आरम्भ होता था; जिसके उत्साह में उत्तरोत्तर वृद्धि हो जाती, ज्योंही प्रभुपाद राधा-कृष्ण के श्रीविग्रहों के समक्ष संध्या आरती के लिए आते। प्रभुपाद कभी अंग्रेजी में व्याख्यान देते, तो कभी बंगाली में। बाद में भक्त संसार-भर में कृष्णभावनामृत आन्दोलन के कार्यकलापों की स्लाइडें दिखाई जाती थीं और प्रभुपाद श्रोताओं के प्रश्नों के उत्तर देते थे। कार्यक्रम के

अन्त में लोग श्रीविग्रहों को चढ़ाए गये प्रसाद को पाने के लिए आगे की ओर ठेल-पेल करने लगते थे।

• • •

नक्सलवादी आतंकवादियों ने प्रभुपाद को जीवन की धमकी दी। ये युवा साम्यवादी आतंकवादी, जो प्रभुपाद के १९७० में कलकत्ता आगमन के समय सक्रिय थे, अब तक कभी भी उनके लिए बाधक नहीं बने थे। उनकी कार्यविधि यह थी कि वे प्रसिद्ध व्यवसायियों से उनके घरों या सड़कों में मिलते थे और उन्हें नक्सलवादी राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति में सहयोग देने को बाध्य करते थे। यदि कोई व्यवसायी मना करता था, तो वे उसका घर या उसके कारोबार की जगह जला देते थे या उसकी हत्या तक कर देते थे। नक्सलवादियों ने, जो सारे बंगाल को धार्मिक परम्पराओं से हटाकर साम्यवाद अंगीकार करने की ओर मोड़ना चाहते थे, देखा कि प्रभुपाद कलकत्ता में धार्मिक भावना को पुनः जगा रहे थे। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि प्रभुपाद के पंडाल में लोगों के भारी जमघट से साम्यवाद के सिद्धान्तों को क्षति पहुँच रही थी।

"चले जाओ या मरो," प्रभुपाद को चेतावनी मिली। उन्होंने पुलिस को सूचना दी, जिसने सहायता करने में अपनी असमर्थता प्रकट की। पुलिस ने कहा कि समस्त कलकत्ता नक्सलवादियों से त्रस्त था। किन्तु प्रभुपाद ने भय-त्रस्त होने से इनकार किया; वे उड़ान के लिए तैयार नहीं थे। यदि वे उन पर आक्रमण भी करते हैं, प्रभुपाद ने कहा, तो एक वैष्णव के लिए शरीर-त्याग का इससे अच्छा तरीका क्या होगा कि वह भगवान् की महिमा का गान करते हुए शरीर छोड़े?

अगले दिन रात को जब प्रभुपाद श्रोताओं के सामने बोलने के लिए आये, तो उन्होंने शरारती युवकों का एक दल, जो नक्सलवादियों का था, मंच के निकट देखा। वे मंच पर बैठाए जाने में कुछ विशिष्ट जनों के प्रति दिखाई गई वरीयता का प्रतिवाद कर रहे थे। जब एक युवा उग्रवादी ने चिल्लाकर कहा कि वे स्वयं मंच पर नृत्य करना चाहता है, तो भक्तों ने उसे कीर्तन में सम्मिलित होने के लिए आमंत्रित किया। नक्सलवादी मुकर गये, लेकिन वे चिल्लाते रहे और सभा में बाधा डालते रहे। वे लकड़ी की कुर्सियों की सीटों को थपथपाने लगे, नक्सलवादी-नारे लगाने लगे और पंडाल को जला देने की धमकी देने लगे। श्रोता-मंडली में अन्य लोग घबराकर आपस में बात करने लगे, इससे हलचल में और भी वृद्धि हो गई। व्यवस्था स्थापित करने के विफल प्रयास में कुछ भक्तों ने उग्रवादियों को धमकी भी दी। श्रोता-मंडली में धक्कमधक्का और हाथापायी होने लगी।

"*चिन्तामणि-प्रकर-सद्मसु कल्पवृक्ष। लक्षावृतेषु सुरभीर अभि पालयन्तम..*" ध्वनि

विस्तारक यंत्र से निकलकर प्रभुपाद की आवाज सर्वत्र गूँजने लगी। भीड़-भाड़ से उदासीन दिखते हुए, केवल कृष्ण पर निर्भर रहते हुए, वे *ब्रह्म-संहिता* के स्तोत्रों का गायन करने लगे और कुछ ही मिनटों में हर एक शान्त हो गया। जो जाना चाहते थे, वे चले गये, और जो रुकना चाहते थे, वे बैठ गये। भीड़ अनुशासन में आ गई; प्रभुपाद भाषण करने लगे।

"चले जाओ या मरो" की कई धमकियाँ आईं, और अगली रात में नक्सलवादी पंडाल को जला देने की धमकी देते हुए फिर प्रकट हुए। "उन्हें बुलाओ," प्रभुपाद ने कहा, "मैं उनसे मिलूँगा।" भक्तों ने इसमें खतरा समझा, पर प्रभुपाद हठ करते रहे। पंडाल के पीछे एक छोटे-से कमरे में प्रभुपाद ने विरोधी युवकों से बात की। पहले वे क्रोध में और अवज्ञापूर्ण थे, किन्तु जब प्रभुपाद ने साम्यवाद की वैदिक धारणा की—कृष्ण को केन्द्र में रखकर व्याख्या की, तो युवकों की रुचि जगी। वे बिना कोई और व्यवधान उत्पन्न किये, प्रभुपाद की बैठकें होने देने के लिए राजी हो गये।

अच्युतानन्द स्वामी : *दस दिवसीय पंडाल कार्यक्रम की अन्तिम रात्रि बहुत शानदार थी। उसमें चालीस हजार से अधिक लोग सम्मिलित हुए। मैं गन्ने का रस लेने के लिए बाहर गया था। जब मैं बाहर जा रहा था, तो पंडाल पूरी तरह भरा था, किन्तु जब मैं बाहर निकल गया तो मैंने पंडाल के चारों मुख्य द्वारों से जन-प्रवाह को अन्दर घुसते देखा। मैंने इसे कृष्ण की रहस्यमय शक्ति माना, क्योंकि पंडाल पहले से पूरा भरा था, फिर भी उसमें हजारों लोग घुस रहे थे। मैंने सोचा कि जरूर ये कृष्ण हैं, जो स्थान का असीम विस्तार कर रहे हैं।*

सांध्य कार्यक्रम की चरम परिणति जुलूस में हुई, जो पंडाल से आरम्भ हुआ और पार्क स्ट्रीट से होता हुआ अल्बर्ट रोड स्थित इस्कान मन्दिर तक गया। राधा-गोविन्द के श्रीविग्रह एक पालकी में सवार होकर मन्दिर गये। वहाँ उन्हें एक वेदिका पर आसीन किया गया। मन्दिर में आरती के बाद शेष भीड़ बिखर गई।

उस रात कलकत्ता के मन्दिर में अच्युतानन्द स्वामी प्रभुपाद की बगल में खड़े थे। "प्रभुपाद," उन्होंने कहा, "किसी ने कृष्ण की बांसुरी उल्टी रख दी है।" प्रभुपाद ने देखा। वह उल्टी रखी थी। "कृष्ण शक्तिशाली हैं," अच्युतानन्द की ओर मुड़ते हुए उन्होंने कहा, "वे बांसुरी दूसरे सिरे से भी बजा सकते हैं।"

• • •

श्रील प्रभुपाद मायापुर में एक जमीन का टुकड़ा पाने की कोशिश अब भी कर रहे थे। मायापुर के अपने गुरु-भाइयों से सहायता पाने का विचार छोड़कर अब बंगाली मित्रों के माध्यम से वे मायापुर के मुस्लिम किसानों से बात चला रहे थे। आस्ट्रेलिया से वापस आने

के बाद प्रभुपाद ने तमाल कृष्ण को इस आदेश के साथ मायापुर भेजा था कि जब तक वह जमीन न खरीद ले, वापस न आये। तमाल कृष्ण का उद्देश्य सफल हुआ और मायापुर में नौ बीघा, तीन एकड़, जमीन खरीदकर छह दिन के बाद वह कलकत्ता लौटा।

पर मायापुर का महत्त्व समझना भक्तों के लिए कठिन था। एक भक्त जायदाद देखने के लिए कलकत्ता से मायापुर की यात्रा पर गया और लौटने के बाद उसने प्रभुपाद से पूछा, "हम वहाँ क्या करने जा रहे हैं? वहाँ केवल एक बड़ा खाली मैदान है। वहाँ कुछ नहीं है।"

"क्योंकि वहाँ कारखानें और कारें नहीं हैं," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "इसलिए तुम सोचते हो कि वहाँ करने को कुछ नहीं है। किन्तु हम मायापुर में हरे कृष्ण कीर्तन करने जा रहे हैं। हम वहाँ एक विशाल मन्दिर बनाएँगे और संसार के सारे भक्त वहाँ, भगवान् चैतन्य की जन्मभूमि में, जा सकते हैं और हरे कृष्ण का कीर्तन कर सकते हैं।" २८ मई को प्रभुपाद ने लिखा,

> तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि हमने भगवान् चैतन्य के जन्म-स्थान, मायापुर में लगभग पाँच एकड़ जमीन खरीद ली है। और हमारा प्रस्ताव है कि हम जन्माष्टमी से आरम्भ करके वहाँ दो सप्ताह तक बढ़िया उत्सव करें। उसी समय नींव का शिलान्यास होगा। मेरी इच्छा है कि हमारे सभी प्रमुख शिष्य उस अवसर पर भारत आयें। हमारी ५० शाखाएँ हैं, इसलिए हर शाखा से कम-से-कम एक शिष्य को उत्सव में सम्मिलित होना चाहिए।

• • •

जून १९७१

प्रभुपाद महीनों से मास्को जाने की योजना बना रहे थे। रूसी जनता को धर्मोपदेश देने की इच्छा के अतिरिक्त उनका विशेष विचार भारत-विद्या के एक रूसी प्रोफेसर, जी. जी. कोटोव्सकी से भेंट करने का था। प्रोफेसर कोटोव्सकी मास्को की यू.एस.एस.आर. एकेडमी आफ् साइंसेज में भारतीय तथा दक्षिण-एशियाई अध्ययन विभाग के अध्यक्ष थे और प्रभुपाद एक वर्ष से उनसे पत्र-व्यवहार कर रहे थे।

पश्चिम जर्मनी में कृष्णदास ने हैमबर्ग विश्वविद्यालय के किसी डॉ. बर्नहार्ट की सहायता से भारत-विद्या के अन्य रूसी विद्वानों के नाम प्राप्त किये थे। दिसम्बर १९७० में कृष्णदास को लिखे गये एक पत्र से प्रभुपाद की रूस में धर्मोपदेश करने की योजना प्रकट हुई थी।

> रूसी जनता में इस सन्देश का प्रचार करने के तुम्हारे उत्साह से मैं बहुत प्रोत्साहित हुआ हूँ, और डॉ. बर्नहार्ट की सहायता से पत्र भेजने का तुम्हारा विचार बहुत अच्छा है। वे बहुत बड़े विद्वान हैं और हमारे आन्दोलन के प्रशंसक भी हैं। इसलिए यदि तुम मेरे लिए रूस की यात्रा का प्रबन्ध करो, तो मैं उसे स्वीकार करने को तैयार हूँ। देखना है कि कृष्ण की क्या इच्छा है।... यदि हम अपने विश्व संकीर्तन दल के साथ रूस जा सकें, तो निश्चित है कि वहाँ की जनता इसे पसन्द करेगी और लोग देखेंगे कि वास्तविक शान्ति आन्दोलन, कीर्तन है,—पवित्र नामों का कीर्तन—हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे/ हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे। अत: प्रयत्न करो।

श्रील प्रभुपाद ने कृष्णदास को सिखाया था कि भारत-विद्या-विशारद रूसियों से मेल-मिलाप कैसे बढ़ाया जाये।

> तुम उनसे कुछ प्रश्न पूछ सकते हो, यथा—जीवन का चरम लक्ष्य क्या है? आपके जीवन का आदर्श चरम लक्ष्य क्या है? मानव और पशु-जीवन में क्या अन्तर है? सभी सभ्य समाजों द्वारा धर्म क्यों स्वीकार किया जाता है? इस तरह उनकी स्थिति या विचार जानने के लिए प्रश्न पूछे जा सकते हैं। हमें किसी नास्तिक से चिढ़ नहीं है, बशर्ते कि उसका कोई दार्शनिक विचार हो। इस तरह प्रोफेसरों से कुछ उत्तर पाने की कोशिश करो। अन्त में यदि तुम मास्को में एक केन्द्र स्थापित कर सको, तो यह तुम्हारे लिए गौरव की बात होगी। जहाँ तक रूसी भाषा सीखने का प्रश्न है, यह कोई आवश्यक नहीं है; पर यदि तुम सीखते हो, तो वह ठीक ही है। मेरी बड़ी इच्छा रुस में एक केन्द्र स्थापित करने की है, अत: सम्प्रति उस केन्द्र को मैं मास्को में स्थापित देखना चाहता हूँ।

प्रोफेसर जी. जी. कोटोव्सकी ने मार्च १९७१ में कृष्णदास के पत्र का उत्तर दिया था।

> स्वामी भक्तिवेदान्त की व्याख्यान-यात्रा के सम्बन्ध में सूचना के लिए धन्यवाद। यदि वे मास्को आते हैं, तो रूसी विद्वान, जो यू.एस.एस.आर. एकेडमी आफ साइंसेज के इंस्टीट्यूट आफ ओरियण्टल स्टडीज में प्राचीन भारतीय संस्कृति में शोध-कार्य कर रहे हैं, उनका स्वागत करेंगे। स्वामी भक्तिवेदान्त के यू.एस.एस.आर में आगमन की तिथि और उनके यहाँ रहने के बारे में सूचना के लिए मैं आपका आभारी हूँगा।

श्रील प्रभुपाद ने प्रोफेसर कोटोव्सकी के पत्र का उत्तर स्वयं दिया था।

...ज्ञात हुआ था कि आप और आपके विश्वविद्यालय की अभिरुचि कृष्ण संस्कृति और दर्शन को जानने में है। प्राचीन कृष्ण संस्कृति और दर्शन संसार में या सारे विश्व में सबसे प्राचीन है। कम-से-कम ऐतिहासिक दृष्टि से यह ५००० वर्ष से कम प्राचीन नहीं है।

कदाचित् आप अवगत हैं कि मैंने यह सांस्कृतिक आन्दोलन १९६६ में आरम्भ किया था और यह सारे संसार में फैल चुका है। कृष्ण संस्कृति भारत में इतनी लोकप्रिय है कि सरकार भी एयर इंडिया टाइम-टेबल से बहुत-से विदेशियों को कृष्ण संस्कृति की भूमि, वृन्दावन आने के लिए आकृष्ट करती है। कृपया एयर इंडिया टाइम-टेबल (अप्रैल १९७१) के संलग्न पृष्ठ का अवलोकन करें, जिसमें सामान्य आकर्षण के लिए कृष्ण-संस्कृति को अंकित किया गया है।

सारे संसार में इस कृष्ण-संस्कृति का प्रसार करने के निमित्त मेरा जीवन अर्पित है। मेरा विचार है कि यदि आप अपने देश में इस महान् कृष्ण-संस्कृति और दर्शन के बारे में बोलने का मुझे अवसर देंगे, तो इस सरल कार्यक्रम को आप पसन्द करेंगे और उससे लाभान्वित होंगे। इस संस्कृति को इतनी अच्छी तरह आयोजित किया गया है कि संसार-भर में कोई भी विचारशील व्यक्ति इसे स्वीकार करेगा।

पूर्वी गोलार्ध में एक वर्ष तक धर्मोपदेश करने के बाद प्रभुपाद पश्चिम जाने को उत्सुक थे, और उन्होंने मास्को की उड़ान पकड़ने की योजना बनाई, और वहाँ से योरप जाने की। प्रभुपाद और उनके सहयात्रियों, श्यामसुन्दर और अरविन्द को रूस जाने के लिए पर्यटक-प्रवेश-पत्र पाना सरल था। उन्हें सरकार-नियंत्रित पांच दिवसीय यात्रा पर निकलना था, उनका हर कार्यक्रम सोवियत टूरिस्ट ब्यूरो द्वारा आयोजित होना था और हर एक के लिए अग्रिम भुगतान करना था।

• • •

मास्को-उड़ान के चालक, कैप्टन लाल ने प्रभुपाद को महत्त्वपूर्ण यात्री माना और उड़ान के मध्य वे उनसे मिलने के लिए उनके पास आये। दोनों ने प्रभुपाद की यात्रा, मास्को में उनके व्याख्यान की सम्भावनाओं और बम्बई के बारे में बातें की, जहाँ प्रभुपाद जमीन खरीदने की कोशिश कर रहे थे। कैप्टन लाल ने प्रभुपाद को काकपिट (चालक-

स्थान) में आने को आमंत्रित किया। प्रभुपाद गये और कैप्टन की सीट के पीछे बैठ गये; और उन्होंने वायुयान के उपकरणों और उड़ान के सम्बन्ध में तकनीकी प्रश्न पूछे। प्रभुपाद और कैप्टन लाल में मास्को में फिर मिलना तय हुआ।

प्रभुपाद, उनके सचिव और उनके सेवक सोवियत सीमा-शुल्क और आप्रवासन से शीघ्रता और आसानी से निपट गये और एक सरकारी यात्रिक-मार्गदर्शक उन्हें लिमोसीन द्वारा होटेल नेशनल ले गया। रेड स्क्वायर और लेनिन की मजार और क्रेमलिन के निकट का यह होटल महंगा, किन्तु साधारण था। प्रभुपाद का कमरा अँधेरा और संकरा था, जिसमें मुश्किल से एक चारपाई और दो कुर्सियों के लिए स्थान था। श्यामसुन्दर और अरविन्द का कमरा काफी दूर था और प्रभुपाद ने निश्चय किया कि अरविन्द उन्हीं के कमरे में आ जाये, जिससे उनका कमरा और भी संकरा लगने लगा।

अरविन्द ने होटल-मैनेजर से कहा कि वे होटल का खाना नहीं खायेंगे, वरन् अपना भोजन स्वयं बनाएँगे। पहले तो मैनेजर ने इनकार किया, पर अन्त में नौकरानी के रसोई-घर को इस्तेमाल करने की अनुमति दे दी।

इस समस्या के हल हो जाने पर दूसरी समस्या भोजन पाने की थी। प्रभुपाद ने श्यामसुन्दर को बाहर भेजा। सड़क के पार श्यामसुन्दर को एक दूध तथा दही की दुकान मिली। पर उसे बिना फल, सब्जियों या चावल के ही प्रभुपाद के पास लौटना पड़ा। प्रभुपाद ने उसे पुनः भेजा। इस बार श्यामसुन्दर दिन-भर बाहर रहा और कुछ गोभियाँ लेकर लौटा। दूसरे दिन प्रभुपाद ने उसे चावल लाने के लिए भेजा। जब कई घंटों के बाद श्यामसुन्दर चावल लेकर आया, तो प्रभुपाद ने देखा कि वह चावल बहुत खराब, उत्तरी कोरियाई किस्म का, बहुत कड़ा था। प्रभुपाद ने फल मँगाए, तो श्यामसुन्दर को शहर में मीलों चक्कर लगाना पड़ा, किन्तु ताजे फल के नाम पर कुछ लाल चेरी ही हाथ लगी। श्यामसुन्दर जहाँ भी जाता, कोई भी चीज खरीदने के लिए उसे लम्बी लाइन में खड़ा होना पड़ता। किन्तु, सामान्यतः उसे लाइन में खड़ा देख कोई व्यक्ति यह जानकर कि वह पर्यटक है, उसे लाइन के आगे खड़ा कर देता। श्यामसुन्दर को जो भी वस्तु खरीदनी होती, वह कूपन से खरीदनी पड़ती।

प्रभुपाद अपने दैनिक कार्यक्रम का पालन करते हुए शान्त और नियमित बने रहे। वे तड़के उठते और अनुवाद करते। तब सवेरे की ठंडी हवा में वे वीरान-सी सड़कों में टहलने निकलते। केसरिया चादर ओढ़े हुए, वे जल्दी-जल्दी डग भरते और श्यामसुन्दर उनका फोटो लेने के लिए कभी कभी भागकर उनके आगे निकल जाता।

जब वे लेनिन की मजार से होकर निकलते, तो वहाँ लाइन लगनी शुरू हो गई होती। "जरा देखो," प्रभुपाद ने एक दिन सवेरे टीका की, "यही इनका ईश्वर है। लोग शरीर तथा

आत्मा में अन्तर नहीं जानते। वे शरीर को वास्तविक व्यक्ति समझते हैं।

प्रभुपाद को यातायात की विरलता पसन्द आई—कुछ ट्रालियाँ तथा साइकलें चलती थी और अधिकतर लोग पैदल चलते थे। जब वे पुराने, अलंकृत भवनों से होकर निकले, तो उन्होंने वृद्धा स्त्रियों को मोटी पाइपों से सड़कें धोते देखा—यह अच्छी प्रथा है, वे बोले। रूसी लोग अमेरिकनों की अपेक्षा अधिक नियमित, व्यवस्थित जीवन बिताते प्रतीत होते थे। ये भोले-भाले, संयमी लोग जिन्हें अमेरिका में व्याप्त आनन्दवाद ने भ्रष्ट नहीं किया था, कृष्णभावनामृत के लिए उपयुक्त थे। किन्तु आध्यात्मिक आहार के बिना वे विपन्न लग रहे थे।

• • •

प्रभुपाद ने श्यामसुन्दर के द्वारा प्रोफेसर कोटोव्स्की से उनकी भेंट कराने का प्रबन्ध कराया और उन्होंने कैप्टन लाल से अपने साथ चलने को कहलवाया। टूरिस्ट ब्यूरो ने एक मोटर-कार और गाइड की व्यवस्था कर दी। प्रभुपाद और उनका दल शहर के बाहर प्रो. कोटोव्सकी के कार्यालय गये, जो एकेडमी आफ साइंसेज में एक पुराने सफेद ईंट के भवन में स्थित था।

प्रभुपाद के पहुँचने पर अधेड़ आयु का रूसी प्रोफेसर, जो भूरे रंग का सूट पहने था, अपने अस्तव्यस्त डेस्क से उठ खड़ा हुआ और उसने प्रभुपाद का अपने छोटे-से कार्यालय में स्वागत किया। पर प्रोफेसर कोटोव्स्की कुछ हिचकिचाया लगता था; वह अपने पत्रों की अपेक्षा अधिक सतर्क था। जब श्यामसुन्दर ने प्रभुपाद की उत्सुकता का उल्लेख किया कि वे एकेडमी के अभिरुचि रखने वाले विद्वानों के समक्ष भाषण देना चाहते हैं, तो प्रोफेसर कोटोव्स्की ने साफ इनकार कर दिया कि इसकी अनुमति कभी भी नहीं मिल सकती। प्रभुपाद को निराशा हुई।

किन्तु अगले ही क्षण लगा कि प्रभुपाद अप्रभावित थे और वे डेस्क पर बैठे प्रोफेसर कोटोव्स्की के निकट की खड़ी-पीठ वाली कार्यालय कुर्सी में बैठे विनीत, भद्र ढंग से बोलने लगे। श्यामसुन्दर ने अपना टेप रिकार्डर चालू कर दिया; प्रोफेसर कोटोव्स्की ने सतर्क दृष्टि से उसे देखा पर उसने कोई आपत्ति नहीं की।

प्रभुपाद : "अभी कुछ दिन हुए मैं मास्को न्यूज समाचार पत्र में पढ़ रहा था कि एक कम्यूनिस्ट काँग्रेस की बैठक हुई, जिसमें अध्यक्ष ने घोषणा की कि 'सुधार लाने के लिए हम दूसरों के अनुभव लेने को तैयार हैं।' अतः मेरा विचार है कि समाजवाद या साम्यवाद की वैदिक विचारधारा से साम्यवाद धारणा में काफी सुधार होगा।"

जिस समय प्रो. कोटोव्स्की का विदेशी भेंटकर्ता बता रहा था कि वैदिक संस्कृति में

किस तरह कोई गृहस्थ अपने घर में रहने वाले प्रत्येक प्राणी को—यहाँ तक कि छिपकली को भी—भोजन देता है और किस तरह भोजन करने के पहले वह सड़क पर जो कोई भी भूखा मिलता है, उसे खाने के लिए आमंत्रित करता है, उस समय प्रो. कोटोव्स्की यह सब बड़े ध्यान से और शिष्टतापूर्वक सुन रहा था। "इस तरीके से," प्रभुपाद ने बताया, "साम्यवाद की समाजवादी धारणा के सम्बन्ध में बहुत-से अच्छे विचार हैं। इसलिए मैंने सोचा कि ये विचार आपके कुछ चिन्तनशील व्यक्तियों में हो चुके होंगे। इसलिए मैं भाषण देने को उत्सुक था।"

प्रोफेसर कोटोव्स्की की अकादमिक रुचि भड़क उठी। "आप जानते हैं, यह बहुत मनोरंजक है," उसने अपनी सुस्पष्ट अंग्रेजी में जोर के लहजे में कहा। "जैसी स्थिति हमारे देश की है, उसमें प्राचीन विचारों के इतिहास में बहुत रुचि ली जा रही है।" उसने अपने सहकर्मियों की और स्वयं अपनी उपलब्धियों का वर्णन किया, विशेषकर उस छोटी पुस्तिका का, जिसमें भारत-विद्या में सोवियत अध्ययनों का प्रमुखता से उल्लेख था और जिसे उन लोगों ने हाल में ही तैयार किया था। उसने कहा कि उसकी एक प्रति वह प्रभुपाद को देना चाहता था।

प्रोफेसर कोटोव्स्की : "आपको यह जानने में रुचि होगी कि हमने सभी नहीं, पर कुछ *पुराण* प्रकाशित किये हैं। इसके अतिरिक्त हमने *रामायण* के कुछ भाग और *महाभारत* के रूसी भाषा में आठ खंड प्रकाशित किये हैं और उसके बाद विभिन्न लोगों द्वारा अनूदित पूरे *महाभारत* का दूसरा संस्करण निकाला है। पूरी *मनुस्मृति* का भी अनुवाद हुआ है और संस्कृत व्याख्या के साथ वह प्रकाशित की गई है। और इन प्रकाशनों में लोगों की इतनी अधिक रुचि थी कि वे सभी एक सप्ताह के अन्दर बिक गये। अब वे प्राप्त नहीं हैं। एक महीने के बाद पुस्तकों के बाजार में उनका मिलना असम्भव है। मास्को और यू.एस.एस.आर. की पढ़ी-लिखी जनता में प्राचीन वैदिक संस्कृति में इतनी अधिक अभिरुचि है।"

प्रभुपाद : "इन *पुराणों* में *श्रीमद्‌भागवत* महापुराण कहलाता है।" और उन्होंने *श्रीमद्‌भागवत* के अपने अनुवाद के बारे में उसे "वैदिक कल्पवृक्ष का परिपक्व फल" बताया। यदि प्रोफेसर की रुचि हो तो वे कुछ खंड दिखाने को तैयार थे।

प्रोफेसर कोटोव्स्की ने बताया कि मास्को और लेनिनग्राड के पुस्तकालयों में भारतीय संस्कृति के लगभग सभी प्रमुख संस्कृत ग्रंथ उपलब्ध थे। इन पुस्तकालयों में केवल प्राचीन ग्रंथ ही नहीं, वरन् आधुनिक साहित्य की पुस्तकें भी प्राप्त थीं, जिनसे हिन्दुत्व का अधुनातम अध्ययन पूरा हो जाता है।

"हिन्दुत्व," प्रभुपाद ने बीच में टोका, "एक बहुत क्लिष्ट विषय है।" और वे दोनों

हँस पड़े। प्रोफेसर कोटोव्स्की सहमत हुआ कि हिन्दुत्व एक धर्म से अधिक था, वह एक जीवन पद्धति था। किन्तु प्रभुपाद ने बताया कि हिन्दू नाम वास्तव में गलत था। वैदिक संस्कृति की व्याख्या करने वाला वास्तविक नाम वर्णाश्रम था। प्रभुपाद ने संक्षेप में चारों आश्रमों की व्याख्या की : ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र।

प्रोफेसर कोटोव्स्की : "आपने कहा है कि किसी भी समाज में चार विभाग होते हैं, पर उनमें अन्तर करना इतना आसान नहीं है। उदाहरण के लिए, किसी समाज में किन्ही विभिन्न सामाजिक वर्गों और व्यावसायिक समुदायों को चार विभागों में बाँटा जा सकता है। इसमें कोई कठिनाई नहीं है। कठिनाई केवल समाजवादी समाज में होगी, उदाहरण के लिए हमारे देश में और अन्य समाजवादी समाजों में। आप उत्पादक समुदाय और मजदूरों में अन्तर कैसे कर सकते हैं?

प्रभुपाद ने प्रोफेसर के प्रश्नों का स्वागत किया, यद्यपि ये प्रश्न सोवियत समाजवादी स्वार्थों से भरपूर थे। प्रभुपाद ने प्रोफेसर को इतना विद्वान नहीं समझा, जितना सोवियत विश्वविद्यालय प्रणाली का एक मोहरा। जिस तरह एक राजनीतिक शक्ति अपने प्रतिद्वन्द्वी को समझने का प्रयास करती है, उसी तरह यह प्रोफेसर भारतीय संस्कृति के विषय में पूछ रहा था, जिससे उसकी सरकार अपनी विचारधारा का प्रवेश उसमें करा सके। प्रोफेसर कोटोव्स्की की वैदिक संस्कृति में जो दिखावटी रुचि थी, उसके पीछे प्रभुपाद को समाजवादी दल का दृष्टिकोण दिख रहा था, जो वैदिक दर्शन का सर्वथा विरोधी है। तब भी प्रभुपाद चतुराई के साथ परम्परानुसार, कृष्णभावनामृत बताते रहे और शास्त्र तथा तर्क के द्वारा प्रोफेसर कोटोव्स्की को आश्वस्त करने का प्रयास करते रहे।

भगवद्गीता से जिससे एक शास्त्र के रूप में प्रोफेसर अपने ढंग से परिचित था, उद्धरण देते हुए प्रभुपाद ने भगवान् कृष्ण को समाज में चार विभागों के निर्माता के रूप में चित्रित किया। प्रोफेसर कोटोव्स्की ने तुरन्त इसका खंडन किया और कहा कि सोवियत विद्वानों का मत है कि वर्णाश्रम विभाग वैदिक सभ्यता में हाल में जोड़े गये थे। उसने अपना यह मत फिर से प्रस्तुत किया कि वर्णाश्रम विभागों का समाजवाद में कोई अर्थ नहीं था।

प्रोफेसर कोटोव्स्की : "आधुनिक समाजवादी समाज और समाजवाद के पूर्व के समाजों में बड़ा अन्तर है, क्योंकि आधुनिक पाश्चात्य समाज में आप सभी सामाजिक और व्यावसायिक वर्गों को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य (या कारखाने के मालिकों) और शूद्र (निम्नकोटि के काम करने वालों) के इन विशिष्ट वर्णाश्रमों में रख सकते हैं। किन्तु हमारे यहाँ कोई वैश्य नहीं है। चूँकि हमारे कारखानों में प्रशासनिक वर्ग प्रबन्धक वर्ग होता है— इसलिए आप उन्हें क्षत्रिय कह सकते हैं—और श्रमिकों को शूद्र कह सकते हैं, लेकिन यह

मध्यवर्ती वर्ग (वैश्य) नहीं है।"

प्रभुपाद : "इसका वर्णन है— *कलौ शूद्र-सम्भव:।* इस युग में व्यावहारिक रूप से सभी मनुष्य शूद्र हैं। इसका वर्णन है। किन्तु यदि केवल शूद्र हों, तो समाज-व्यवस्था में गड़बड़ी होगी। आपके राज्य में शूद्रों के होने के बावजूद, ब्राह्मण भी हैं। यह आवश्यक है। इसलिए यदि आप समाज को इस तरह विभाजित नहीं करते, तो अव्यवस्था हो जायेगी। यह वेदों का वैज्ञानिक विचार है। आप शूद्र वर्ग के हो सकते हैं, लेकिन सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने के लिए आपको कुछ शुद्रों को प्रशिक्षण देकर ब्राह्मण बनाना होगा। समाज शूद्रों पर निर्भर नहीं रह सकता।

प्रभुपाद ने अपनी मानक उपमा प्रस्तुत की और समाज की तुलना मानव-शरीर से की। शरीर के सभी अंग आवश्यक होते हैं, केवल पैर ही नहीं, वरन् पेट, बाहें और सिर भी। "अन्यथा," उन्होंने कहा, "शरीर ठीक से काम नहीं करेगा। जब तक असंतुलन बना रहेगा, कोई-न-कोई विघ्न आता रहेगा।"

प्रभुपाद ने कहा कि मानव समाज की भूल यह है कि वह यह नहीं समझता कि मानव-जीवन का उद्देश्य क्या है। "वे नहीं जानते कि अगला जीवन क्या है," उन्होंने कहा, "ऐसा कोई ज्ञान-विभाग या वैज्ञानिक विभाग नहीं है, जो अध्ययन करे कि इस शरीर का अन्त होने पर आगे क्या होगा।"

प्रोफेसर कोटोव्स्की ने शिष्टतापूर्वक पूर्ण विरोध करते हुए कहा, "स्वामीजी, जब शरीर मर जाता है, तो उसका स्वामी मर जाता है।" प्रभुपाद ने यह उत्तर ध्यान से सुना। सोवियत अकादमी में भारतीय अध्ययन विभाग का अध्यक्ष एक विद्वान प्रोफेसर अज्ञान के पाश में जकड़ा था। वह कौन था, इस विषय में उसकी धारणा एक पशु से अधिक आगे नहीं बढ़ी थी।"

"नहीं," प्रभुपाद ने तुरन्त उत्तर दिया, "इस तथ्य को आपको जरूर जानना चाहिए। इस विश्वविद्यालय में ज्ञान का ऐसा विभाग क्यों नहीं है, जहाँ इस तथ्य का वैज्ञानिक अध्ययन हो सके? मेरा यही कथन है। ऐसे विभाग की कमी है। आप जो कह रहे हैं, वही सच हो सकता है या मैं जो कह रहा हूँ, वह सच हो सकता है; किन्तु ज्ञान का एक विभाग होना चाहिए। हाल में ही मांट्रियल और टोरन्टो के एक हृदय रोग-विशेषज्ञ डॉक्टर ने स्वीकार किया है कि आत्मा का अस्तित्व है। मेरा उससे कुछ पत्र-व्यवहार हुआ है। उसका दृढ़ विश्वास है कि आत्मा है।"

प्रभुपाद तर्क-पर-तर्क देते गये : "हम ज्ञान किसी आधिकारिक स्रोत से स्वीकार करते हैं।" प्रोफेसर ने प्रतिवाद किया कि हर वस्तु को किसी अनुभव के साक्ष्य पर स्वीकार किया जाना चाहिए। किन्तु वाक्य के बीच में उसने रुककर पूछा, "क्या आपके

संघ की संसार में कई शाखाएँ हैं?"

प्रभुपाद इस्कान के बारे में बात करने लगे जिसकी संसार-भर में पैंसठ शाखाएँ थीं। उन्होंने बताया कि वे इसके बाद पेरिस जा रहे थे, जहाँ उनके शिष्यों ने हाल में ही एक केन्द्र स्थापित किया था; उन्होंने यह भी बताया कि किस तरह अमेरिका के लड़के और लड़कियाँ, विशेष रूप से उनके आन्दोलन में शामिल हो रहे थें। उन्होंने अपने चार निषेध-नियमों (मांस-भक्षण नहीं, अवैध यौनाचार नहीं, मादक-द्रव्य-सेवन नहीं, द्यूत-क्रीड़ा नहीं) की चर्चा की और अपनी प्रकाशित पुस्तकों के बारे में बताया। जब प्रभुपाद ने अपने आन्दोलन की कार्य-प्रणाली के विषय में बताया, तो प्रोफेसर कोटोव्स्की ने सहमतिपूर्वक सिर हिलाया।

जब प्रभुपाद कृष्णभावनामृत की तुलना साम्यवाद से करने की ओर मुड़े, तो उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि दोनों दर्शनों में सहमति थी। और दोनों दर्शन अधिकारी के प्रति समर्पण पर बल देते थे। भक्त कृष्ण को समर्पण करता है, साम्यवादी लेनिन को।

प्रभुपाद : "हमारा जीवन समर्पण से चलता है, क्या ऐसा नहीं है? क्या आप इस तर्क से सहमत नहीं हैं?"

कोटोव्स्की : "किसी हद तक हम समर्पण करते हैं?"

प्रभुपाद : "हाँ, सम्पूर्णतः।"

कोटोव्स्की : "उदाहारण के लिए, हमें समाज के प्रति, पूरे जन-समुदाय के प्रति समर्पण करना पड़ता है।"

प्रभुपाद : "हाँ, सारे जन-समुदाय के प्रति, या राज्य के प्रति, या राजा के प्रति या शासन के प्रति, या जो भी कहें, समर्पण जरूरी है। यह भिन्न-भिन्न तरह का हो सकता है।"

कोटोव्स्की : "कठिनाई केवल यह है कि हम सरकार या राजा के प्रति समर्पण नहीं कर सकते। मुख्य अन्तर इसमें है कि हम समर्पण राजा के प्रति करें, जो एक व्यक्ति है या पूरे समाज के प्रति करें।"

प्रभुपाद : "नहीं, यह तो केवल रंग-परिवर्तन है। समर्पण तो करना ही है। सिद्धान्ततः समर्पण तो होना ही है। राजा, प्रजातंत्र, अभिजाततंत्र, तानाशाही चाहे जो भी हो, किसी के प्रति समर्पण तो करना ही है। वास्तविकता यही है। समर्पण के बिना जीवन नहीं है। यह सम्भव नहीं है। इसलिए हम लोगों को शिक्षा दे रहे हैं कि वे भगवान् को समर्पण करें, जिससे हमें सभी तरह की सुरक्षा मिलती है। जैसाकि कृष्ण कहते हैं—*सर्व-धर्मान् परित्यज्य*। अतः समर्पण तो है ही। कोई नहीं कह सकता कि 'नहीं, मैंने किसी के प्रति समर्पण नहीं किया है।' अन्तर केवल यह है कि वह समर्पण कहाँ करता है। और समर्पण

के चरम लक्ष्य कृष्ण हैं। इसलिए *भगवद्गीता* में कहा गया है—*बहूनां जन्मनां अन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते*—जन्म-जन्मांतर में अनेक वस्तुओं के प्रति समर्पण करने के पश्चात् जब मनुष्य वास्तव में ज्ञान प्राप्त करता है तब वह मेरे प्रति समर्पण करता है।"

प्रोफेसर कोटोव्स्की ने सहमति प्रकट की। लेकिन समर्पण का सम्पादन क्रान्ति के साथ होना है, उसने कहा। उदाहरण के लिए, फ्रांसीसी क्रान्ति एक प्रकार के समर्पण के विरूद्ध विद्रोह थी, और तब भी स्वयं वह क्रान्ति एक दूसरे प्रकार का समर्पण थी, जनता के प्रति समर्पण थी। "इसलिए समर्पण अपने में पर्याप्त नहीं है" प्रोफेसर का तर्क था, "समर्पण को, अन्य लोगों के प्रति समर्पण के विरुद्ध क्रान्ति के साथ सम्पन्न होना है।"

प्रभुपाद : "हाँ, समर्पण तभी विराम को प्राप्त होगा, जब वह कृष्ण के प्रति होगा। वही उसका विराम बिन्दु होगा : और अधिक समर्पण नहीं होगा। अन्य प्रकार के समर्पण को आपको क्रान्ति द्वारा बदलना होता है। किन्तु जब आप कृष्ण के पास जाते हैं—तो वह पर्याप्त होता है—आप सन्तुष्ट हो जाते हैं। ठीक वैसे ही, जैसे मैं आपको एक उदाहरण देता हूँ। एक बच्चा रो रहा है और लोग उसे एक गोद से दूसरी गोद में दे रहे हैं : 'ओह, उसका रोना रुकता ही नहीं,' किन्तु ज्योंही बच्चा अपनी माँ की गोद में पहुँचता है..."

कोटोव्स्की : "उसका रोना रुक जाता है।"

प्रभुपाद : "हाँ, उसे पूरा संतोष हो जाता है। यही हाल समर्पण का है। वह विभिन्न प्रकार से चलता रहेगा। इन सभी समर्पणों का सम्पूर्ण योग माया के प्रति समर्पण है। किन्तु चरम समर्पण कृष्ण के प्रति है और तभी मनुष्य प्रसन्न होगा।"

• • •

केवल तीन दिनों के बाद ही मास्को में प्रभुपाद का उद्देश्य समाप्त लगने लगा। प्रोफेसर कोटोव्स्की से भेंट हो जाने के बाद अब बचा ही क्या था? सरकार और किसी चीज के लिए अनुमति नहीं देती थी। उसने उन्हें पुस्तकें लाने की अनुमति नहीं दी थी; अब उन्हें सार्वजनिक भाषण देने का अवसर नहीं दिया जा रहा था। विदेशी लोग रूसियों से बात नहीं कर सकते थे। प्रभुपाद कहीं जा नहीं सकते थे, जब तक उनके साथ कोई रुसी न हो। फलस्वरूप बिना प्रवचन दिए और बिना उसकी किसी सम्भावना के, वे अपने तंग कमरे में रहते, मालिश कराते, स्नान करते और श्यामसुन्दर जो भी पा सकता, लाकर पका देता, वे उसे ग्रहण करते, कुछ पत्र लिखवा देते, हरे कृष्ण जप करते और *श्रीमद्‌भागवत* का अनुवाद करते रहते।

प्रभुपाद ने एक गाइड लिया और अन्य यात्रियों के साथ एक भरी हुई बस में बैठकर मास्को की सैर की। उन्होंने देखा कि वृद्ध रूसी गिरिजाघर जा रहे थे, जहाँ द्वार पर सशस्त्र

संतरी खड़े थे। उन्होंने अनुमान लगाया कि ये संतरी युवा पीढ़ी को गिरिजाघर में जाकर पूजा करने से रोकने के लिए थे। वे शीघ्र ही सैर से ऊब गये। पर गाइड ने उन्हें टैक्सी करा दी और ड्राइवर को उन्हें होटल नेशनल वापस ले जाने को कहा।

श्यामसुन्दर दिन का अधिकतर भाग ताजा भोजन की तलाश में बिताता। यह सुनकर कि शहर के पार किसी बाजार में संतरे मिल रहे थे, वह शहर पार करने निकल पड़ा। सिर घुटाए और सफेद धोती-कुर्ता पहने वह जहाँ से गुजरता, लोग उसे टकटकी लगाकर देखने लगते। और अँधेरा होने के बाद जब वह लौट रहा था, तो लाल पट्टा बाँधे वर्दीधारी पुरुषों ने उसे स्थानीय उचक्का समझा और आवाज दी। उसे दबोचते हुए उन्होंने उसकी बाहें उसकी पीठ पर बाँध दीं और रूसी भाषा में उस पर चिल्लाने लगे। श्यामसुन्दर की समझ में डाक्यूमेंट (पासपोर्ट) शब्द आ गया। उसने उत्तर दिया, "डाक्यूमेंट, होटल! होटल!" यह जानकर कि श्यामसुन्दर कोई पर्यटक था, अधिकारियों ने उसे छोड़ दिया। श्यामसुन्दर होटल लौटा और जो कुछ घटित हुआ था, वह प्रभुपाद को कह सुनाया। "रूस में कृष्णभावनामृत के बिना कोई आशा नहीं है।" प्रभुपाद ने कहा।

एक बार श्यामसुन्दर दही की दुकान पर पंक्ति में खड़ा था कि उसके पीछे के एक व्यक्ति ने योग के विषय में पूछा। "मैं सचमुच आपसे बातें करना चाहता हूँ" उस आदमी ने कहा और उसने श्यामसुन्दर को अपना नाम, पता और समय दिया जब वे बिना किसी खतरे के मिल सकते थे। जब श्यामसुन्दर ने प्रभुपाद को बताया तो प्रभुपाद बोले, "नहीं, वह पुलिस वाला है, उसके पास मत जाना।"

अपनी खिड़की के सामने खड़े होकर प्रभुपाद ने पास के रेड स्क्वायर में एक परेड का दृश्य देखा—सेना की टुकड़ियाँ, टैंक, तोपें, प्रक्षेपास्त्र सड़कों पर से निकल रहे थे। प्रभुपाद ने कहा कि हमेशा युद्ध की तैयारी में लगे रहकर रूसी नेता लोगों को युद्धोन्मुख रखते हैं और इस तरह क्रान्ति से बचे रहते हैं। उन्होंने युद्ध-प्रिय रूस की तुलना *श्रीमद्भागवत* जैसे प्राचीन वैदिक इतिहासों में वर्णित असुरों से की।

• • •

एक दिन दो जवान व्यक्ति जिनमें एक मास्को में नियुक्त भारतीय राजदूत का पुत्र था और दूसरा एक तरुण मास्कोवासी था, रेड स्क्वायर के निकट मटर-गश्ती कर रहे थे कि उन्होंने एक विस्मयजनक दृश्य देखा। शहरी यातायात की सामान्य नियमित पंक्ति में एक लम्बा नौजवान, सिर मुंडाए, लम्बी लाल शिखा धारण किये और ढीले श्वेत वस्त्र पहने हुए उनके निकट आया। वह श्यामसुन्दर था। भारतीय राजनयिक के पुत्र ने श्यामसुन्दर की वेशभूषा से परिचित होने के कारण उसे रोका। श्यामसुन्दर मुसकराया, "हरे कृष्ण, बंधु।"

और वह उस भारतीय से, जिसका नाम नारायण था, बातें करने लगा। रूसी, इवान, थोड़ी-थोड़ी अंग्रेजी जानता था और उनकी बातों को यथासम्भव गौर से सुनता रहा। वार्ता गम्भीर होने लगी।

"आप आकर मेरे गुरु महाराज से क्यों नहीं मिलते?" श्यामसुन्दर ने पूछा। दोनों युवकों ने अपने आपको सम्मानित हुआ समझा और वे श्यामसुन्दर के साथ तुरन्त होटल नेशनल गये। जब वे वहाँ पहुँचे, तो उन्होंने देखा कि प्रभुपाद अपने बिस्तर में बैठे थे, वे आभामंडित थे और मुसकरा रहे थे। अरविन्द उनके पाँव की मालिश कर रहा था। श्यामसुन्दर भीतर गया और प्रभुपाद को प्रणाम किया। यह देखकर इवान बिल्कुल अभिभूत हो गया।

"आओ," प्रभुपाद ने कहा और वे तीनों उनके चरणों के निकट बैठ गये। पहले नारायण की ओर मुड़ते हुए प्रभुपाद ने उसका नाम और पिता का व्यवसाय पूछा। नारायण को प्रभुपाद अच्छे लगे। उसने उनके लिए हरी सब्जियाँ लाने के लिए अपने आपको प्रस्तुत किया। उसके पिता भारतीय दूतावास में उच्च पद पर थे, अत: उनके लिए भारत से वस्तुएँ हवाई जहाज से आती थीं।

इवान अपने भारतीय मित्र की अपेक्षा प्रभुपाद में अधिक रुचि लेने लगा, और प्रभुपाद उसे कृष्णभावनामृत का दर्शन समझाने लगे, जबकि नारायण अनुवाद करके सहायता करने लगा। इवान अत्यन्त आदर तथा डर से प्रश्न पूछता था और प्रभुपाद उसके प्रश्नों का उत्तर देते थे। एक बैठक में जितना सम्भव था, कृष्णभावनामृत के आधारभूत ज्ञान के सम्बन्ध में प्रभुपाद ने उसे पढ़ाया। प्रभुपाद ने आत्मा और शरीर का अन्तर बताया और परम भगवान् कृष्ण के साथ आत्मा के शाश्वत सम्बन्ध को स्पष्ट किया। उन्होंने *भगवद्गीता* विश्वभर में फैले मन्दिरों के जाल तथा भक्तियोग के अभ्यास में लगे अपने युवा शिष्यों और शिष्याओं के बारे में बताया।

प्रभुपाद ने रूस में धर्मोपदेश देने की इच्छा व्यक्त की, जहाँ कृष्णभावनामृत के लिए विशाल क्षेत्र था, क्योंकि वहाँ के लोग खुले दिमाग के थे और विषय-वासनाओं से दूषित नहीं हुए थे। वे रूस में कृष्णभावनाभावित साहित्य का प्रचार पुस्तकालय या वाचनालय के माध्यम से, या अन्य जिस किसी साधन से सम्भव हो, करना चाहते थे। उन्होंने कहा कि कृष्णभावनामृत सम्बन्धी दर्शन की शिक्षा रूस के सर्वाधिक बुद्धिमान व्यक्तियों को दी जानी चाहिए, किन्तु सरकारी प्रतिबंधों के कारण इसे सतर्कतापूर्वक करना होगा। यहाँ भक्तजन सड़कों में नाच-गा नहीं सकेंगे, किन्तु वे किसी के घर में सामूहिक रूप से शान्तिपूर्ण कीर्तन तो कर ही सकते हैं। तब प्रभुपाद बहुत धीमे स्वर में गाने लगे और कीर्तन में उन लड़कों की अगुवाई करने लगे।

इवान का कृष्ण को इस तरह अपनाना भूखे व्यक्ति द्वारा भोजन ग्रहण के समान था। पर कई घंटों के बाद, उसे और उसके मित्र को जाना पड़ा। वे अगले दिन आने के लिए कहते गये।

श्यामसुन्दर इवान और नारायण के साथ अपना समय बिताने लगा। इवान प्राच्य दर्शनों का विद्यार्थी था और बहुत मेधावी था। वह यह जानने को उत्सुक था कि बाहरी संसार में क्या हो रहा था। वह बीटलों का शौकीन था, और प्रभुपाद ने जार्ज हैरिसन और जान लेनन के साथ अपने संसर्ग के बारे में उसे बताया। श्यामसुन्दर और इवान में रूस के बाहर, तरुणों की महत्त्वाकांक्षाओं और आशाओं के बारे में लम्बी बातें होती रहतीं और श्यामसुन्दर उसे समझाता रहता कि किस प्रकार कृष्णभावनामृत का मार्ग आध्यात्मिक मार्गों का शिरोमणि था। श्यामसुन्दर ने उसे भक्तियोग के मूल सिद्धान्त—यथा नित्यप्रति सोलह माला का जप—बतलाए और उसे *भगवद्गीता यथारूप* की अपनी प्रति भी दी।

प्रभुपाद ने इवान को दिखाया कि चपातियाँ और चावल कैसे बनाते हैं और उन्होंने उससे मांस खाना छोड़ देने को कहा। इवान ने जप करना, नये ढंग से भोजन करना—सब कुछ प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया। इवान प्रशिक्षित किया जा रहा था, ताकि जब प्रभुपाद चले जायें, तो वह अपने आप सब कुछ करता रहे। इवान को स्वतः लगने लगेगा कि वह बदल रहा है और आध्यात्मिक जीवन में आगे बढ़ रहा है। इस तरह कुछ दिन तक अभ्यास करने के बाद उसे दीक्षित किया जा सकेगा। इवान ने कहा कि वह अपने मित्रों को भी कृष्णभावनामृत के बारे में बताएगा। प्रभुपाद को मास्को में रुकने के केवल दो दिन बाकी रह गये थे, इसलिए उन्होंने जितना सम्भव था इवान को सिखाया। इस तरुण रूसी की उत्सुकता तथा बुद्धि से प्रभुपाद को लगा कि रूस आने का उनका यही वास्तविक उद्देश्य था।

प्रभुपाद ने दृष्टान्त दिया कि चावल पकाते समय रसोइए को चावल के केवल एक दाने को देखना होता है, यह जानने के लिए कि पूरे बर्तन का चावल पक गया है या नहीं। इसी तरह इस एक रूसी युवक से बात करके प्रभुपाद बता सकते थे कि रूसी जनता अपने मार्क्सवाद के तथाकथित आदर्श वाले देश में सन्तुष्ट नहीं थी। उन्होंने देखा कि जिस तरह इवान कृष्णभावनामृत को अपनाने के लिए उत्सुक था, उसी तरह लाखों रूसी होंगे।

चाणक्य पंडित का कथन है कि एक खिलता हुआ फूल सारे वन को सुगंधित कर सकता है और एक वृक्ष में लगी आग सारे वन को भस्म कर सकती है। मार्क्सवादी दृष्टिकोण से इवान वह अग्नि था, जो कृष्णभावनामृत औरों में फैलाएगा, इस तरह साम्यवादी आदर्श को वह पराजित कर देगा। और प्रभुपाद के दृष्टिकोण से इवान वह सुगंधित पुष्प था, जो अन्य अनेक लोगों को अपनी सुगंधि दे सकेगा। प्रभुपाद की यह

रूसी यात्रा एक अज्ञात अवकाश बनकर नहीं रह गई, वरन् उसने उन्हें एक वीरान स्थल में कृष्णभावनामृत के बीजारोपण का अवसर दिया।

श्रील प्रभुपाद ने भगवान् चैतन्य के आन्दोलन को एक और देश में ला दिया था। चैतन्य महाप्रभु ने भविष्यवाणी की थी कि यह संकीर्तन ग्राम-ग्राम तथा नगर-नगर तक पहुँचेगा, किन्तु यह भविष्यवाणी सैकड़ों वर्षों तक अपूर्ण बनी रही। पर प्रभुपाद ने जब पहली बार १९६५ में अमेरिका की यात्रा की, तब से उन्होंने बार-बार, एक के बाद एक असम्भव स्थान में भगवान् चैतन्य के सन्देश का बीजारोपण किया था। और उन समस्त स्थानों में यह कदाचित सबसे अधिक असम्भव स्थान था; सरकार द्वारा निरीक्षित मास्को की इस संक्षिप्त यात्रा में उन्होंने सोवियत यूनियन में कृष्णभावनामृत का बीजारोपण कर दिया। वे सुई के समान थे और उनसे सम्बन्धित हर वस्तु और हर व्यक्ति उस धागे के समान था, जो उनका अनुसरण करेगा।

प्रोफेसर कोटोव्स्की ने कहा था कि एक पुराने होटल में रुकने से उनका कार्य बहुत रुचिकर नहीं लगेगा। किन्तु कोटोव्स्की को ज्ञात नहीं था कि प्रभुपाद इस भौतिक जगत में, मास्को ही नहीं, सभी स्थानों से परे थे। प्रभुपाद यहाँ आये थे और कृष्ण ने रुसियों के पास कृष्णभावनामृत का उपहार ग्रहण करने के लिए एक सत्यनिष्ठ व्यक्ति भेज दिया था। यह सोवियत सरकार के विरुद्ध किसी गुप्तचरी के द्वारा घटित नहीं हुआ था, अपितु कृष्ण के विशुद्ध भक्त के विद्यमान होने, तथा धर्मोपदेश द्वारा कृष्ण को प्रसन्न करने की प्रभुपाद की इच्छा के कारण सम्भव हो सका था। प्रभुपाद की शुद्ध इच्छा के उत्तर में कृष्ण ने एक बालक भेजा और इसी एक बालक से उनकी इच्छा औरों तक फैलेगी। कृष्णभावनामृत को कोई नहीं, यहाँ तक कि लौह आवरण भी नहीं रोक सकता। जीव का सहज व्यापार है कृष्ण की सेवा करना। और कृष्ण का स्वभाव है अपने भक्त की शुद्ध इच्छाओं को पूरा करना।

• • •

प्रोफेसर कोटोव्स्की को लिखे गये अपने विदाई पत्र में प्रभुपाद ने आगे भी पत्र-व्यवहार के लिए उन्हें प्रोत्साहित किया।

> आप मेरे व्याख्यानों की पाण्डुलिपियाँ देखना चाहते थे, इसलिए मैं इस पत्र के साथ व्याख्यानों की 'प्रस्तावना' संलग्न कर रहा हूँ। और यदि आप चाहें तो मैं आपको निम्नांकित विषयों पर निबन्ध भेज सकता हूँ :
>
> १. समाजवाद एवं साम्यवाद की वैदिक धारणाएँ

२. वर्गहीन समाज के वैज्ञानिक मूल्य
३. प्रामाणिक परम्परा से ज्ञान

तमाल कृष्ण को लिखे गये एक पत्र में प्रभुपाद ने अपनी मास्को-यात्रा का सारांश दिया।

> नगर सुनियोजित है। उसमें बड़े-बड़े मकान और राजमार्ग हैं और दिन के समय सड़कें बसों और मोटरकारों से भरी रहती हैं। जमीन के नीचे जो ट्रेनें चलती हैं, वे अमेरिका और इंगलैंड से कहीं अच्छी हैं। जमीन के नीचे की सड़कें बहुत साफ-सुथरी रहती हैं। पृथ्वी-तल की सड़कें भी प्रतिदिन धोई जाती हैं। किन्तु शाकाहारी खाद्य-पदार्थ प्राप्त करने में कुछ कठिनाई होती है; तो भी हम कुकर से अपना खाना बनाते हैं, जिससे हमारे जीवन की रक्षा हुई है। हमने एक महान् प्रोफेसर, कोटोव्स्की से बातें कीं और श्यमासुन्दर की बातें अनेक बड़े लेखकों और संगीतज्ञों से हुईं। हमारे साथ दो लड़के कार्य कर रहे हैं, उनमें एक भारतीय है और दूसरा रूसी। इसलिए यहाँ एक केन्द्र-स्थापना की अच्छी सम्भावना है, यद्यपि वातावरण अच्छा नहीं है। दूतावास किसी काम नहीं आया। अतएव हमारी मास्को-यात्रा ज़्यादा उतनी सफल नहीं रही, किन्तु भविष्य के लिए हम आशावान् हैं। मैं कल एक दिन के लिए पेरिस जा रहा हूँ, फिर सैन फ्रैंसिस्को रथयात्रा में जाऊँगा और उसके बाद लंदन वापस आ जाऊँगा।

• • •

पेरिस
जून २५, १९७१

श्रील प्रभुपाद ओर्ली हवाई अड्डे से अभी-अभी पहुँचे थे और भारतीय पर्यटक कार्यालय के सभा-कक्ष में एक सोफे पर लेटे थे। आराधन और उसकी पत्नी शंतनु उनके साथ टैक्सी में आये थे और कमरे में यही दो और व्यक्ति थे। चूँकि कुछ समय बाद प्रभुपाद को संवाददाताओं से मिलना था, इसलिए उन्होंने कहा कि वे आराम करना चाहते थे और उन्होंने अपनी आँखें बन्द कर लीं।

हवाई अड्डे पर पेरिस के आप्रवासन अधिकारियों ने प्रभुपाद को रोक लिया था, जबकि लगभग तीस योरोपीय भक्त, जिनमें से कोई भी उनसे पहले कभी नहीं मिला था, उत्सुकतापूर्वक उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। जब प्रभुपाद वायुयान से सीमा-शुल्क-भवन की

ओर जा रहे थे, तो भक्तों को उनकी एक झलक मिल गई थी और उन्होंने देखा था कि वे अपना संन्यास-दण्ड लिए हुए थे, जिसके साथ उनकी छतरी बँधी थी। प्रभुपाद ने माला की थैली वाला हाथ ऊपर उठाकर भक्तों की ओर उसे हिलाया था। लेकिन वे एक पतली दीवार द्वारा उनसे अलग रखे गये थे, और दो घंटे बाद पेरिस के आप्रवासन अधिकारियों ने अन्त में उन्हें बाहर जाने की अनुमति दे दी।

पेरिस के भक्तों ने प्रभुपाद के लिए कार की व्यवस्था नहीं की थी, इसलिए जब उन्होंने कार माँगी, तो कई भक्त एक टैक्सी बुलाने के लिए दौड़े। जब टैक्सी आ गई तो प्रभुपाद, आराधन और शंतनु को साथ लेकर और शेष लोगों को वहाँ पहुँचने के लिए कहकर, भारतीय पर्यटक कार्यालय के लिए चल पड़े।

अल्प विश्राम के बाद प्रभुपाद ने अपनी आँखें खोली और कमरे में आराधन, शंतनु और श्यामसुन्दर को देखा। अन्य भक्त और संवाददाता शीघ्र ही पहुँचने वाले थे। जब प्रभुपाद उठकर बैठे, तो शंतनु ने उन्हें थोड़ा-सा आम दिया और श्रील प्रभुपाद मुसकराने लगे।

योगेश्वर : *मैं प्रभुपाद के कमरे के द्वार के बाहर बैठा उस आम का छिलका खा रहा था, जिसे प्रभुपाद ने खाया था। मेरा दिल धड़क रहा था, और मैं नहीं जानता था कि क्या होने वाला था—डेढ़ वर्ष हो गये थे जब मैंने दीक्षा ली थी, पर अपने गुरु महाराज से प्रत्यक्ष कभी नहीं मिला था, और अब मुझे पता था कि वे उस दरवाजे के ठीक पीछे विद्यमान थे।*

तब श्यामसुन्दर ने दरवाजा खोलकर बाहर झाँका और मुझे वहाँ बैठा पाया। उसने अपना सिर द्वार के अन्दर कर लिया और कहा, "एक भक्त बाहर बैठा है। श्रील प्रभुपाद, क्या मैं उसे अन्दर आने दूँ?" मैं इधर-उधर देखने लगा और प्रभुपाद, जो सोफे पर लेटे हुए थे, घुटने पर मजबूती से हाथ रखकर उठकर बैठने लगे; उनकी मुद्रा राजसी और गरिमामय थी। सिर हिलाकर उन्होंने श्यामसुन्दर को संकेत दिया कि हम सभी अन्दर आ सकते थे। जीवन में पहली बार मुझे एक पूर्ण चीज देखने को मिली—सद्भावना-प्रदर्शन। अस्तु, मैं अन्दर गया और फर्श पर साष्टांग गिर गया। और तब मैंने समझा कि, "अब मैं अपने आध्यात्मिक गुरु के साथ हूँ।"

धीरे-धीरे भक्त हवाई अड्डे से आने लगे और वे प्रभुपाद के कमरे में प्रविष्ट हुए। संवाददाता भी उसी समय पहुँच गये, जब प्रभुपाद बहुत उत्साह और प्रसन्नता के साथ अपने अनुयायियों से बातें कर रहे थे और मास्को में हाल में अपने धर्मोपदेश के बारे में बताते हुए उन्हें धर्मोपदेश करने के लिए प्रोत्साहन दे रहे थे। भक्तों में से कोई भी अपने गुरु महाराज के साथ पहले शायद ही कभी रहा हो, और लोचनानन्द श्रील प्रभुपाद को उनका परिचय देने लगा।

हरि-विलास : *मैं देर से पहुँचा और जब मैं अन्दर गया, तो मैं आश्चर्य से, आनन्द से, अहंभाव से और विस्मय से भर उठा कि भगवान् का शुद्ध-भक्त वहाँ विराजमान था। मैं घनश्याम के साथ प्रविष्ट हुआ, यह वही लड़का था जिसने प्रभुपाद की कुछ पुस्तकों का अनुवाद फ्रेंच में करना आरम्भ किया था। कमरा करीब-करीब भर गया था और घनश्याम झट पीछे होकर बैठ गया। मैं मन्दिर का अध्यक्ष था और इस बात को लेकर मुझे गर्व था और मैं फूला नहीं समाता था। इसलिए मैं रास्ता बनाता हुआ सामने पहुँचा, जहाँ श्रील प्रभुपाद थे और मैं उनकी बगल में बैठ गया। मैंने उनकी ओर देखा, इस आशा से कि वे मेरी ओर देखेंगे, मुसकराएँगे या इस तरह की कोई चीज करेंगे, मुझे कुछ सराहेंगे। लेकिन उन्होंने मेरी ओर बिल्कुल देखा तक नहीं।*

लोचनानंद सभी भक्तों का परिचय प्रभुपाद को दे रहा था। उसने कहा, "यह घनश्याम है, आपकी पुस्तकों का अनुवादक।" प्रभुपाद बोले, "वह कहाँ है?" और हर एक ने पीछे बैठे घनश्याम की ओर देखा। प्रभुपाद ने कहा, "उसे खड़ा होने दो।" घनश्याम खड़ा हुआ, प्रभुपाद ने उसकी ओर देखा, वे मुसकराए और बोले, "ओह, बहुत धन्यवाद।"

ठीक उसी समय मुझे अजीब-सा लग रहा था। मैं आश्चर्य से भरा बैठा था। "मैंने क्या किया है? मैं आगे बढ़कर सामने आया, और मैं कितनी प्रशंसा चाहता हूँ!"

तब लोचनानंद ने कहा, "यह हरिविलास है। यह मन्दिर का अध्यक्ष है।" प्रभुपाद ने मेरी ओर देखा भी नहीं। और मैं जान गया कि मुझसे बड़ी भारी भूल हुई थी। मुझे अनुभव होने लगा, "मेरे गुरु महाराज हैं।" क्योंकि उन्होंने मुझ में एक बड़ा दोष दिखाने के लिए झट इस प्रकार की कार्यवाही की थी।

संवाददाता प्रश्न पूछने लगे और प्रभुपाद धैर्यपूर्वक उन्हें उत्तर देने लगे। कभी-कभी उनके प्रश्न बड़े छिछले थे और प्रभुपाद ने उनका लाभ उठाते हुए कृष्णभावनामृत दर्शन का विस्तार किया और कृष्णभावनामृत आन्दोलन को समझाया। कॉंफ्रेंस एक घंटे तक चली।

जब प्रभुपाद भारतीय पर्यटक कार्यालय से बाहर निकले, तो उन्होंने देखा कि उन्हें मन्दिर ले जाने के लिए वहाँ कोई मोटरकार नहीं थी। कई भक्त एक टैक्सी की खोज में इधर-उधर दौड़ने लगे, इस बीच प्रभुपाद एक फुटपाथ के केफे की बगल में खड़े होकर प्रतीक्षा करते रहे।

यह सोचकर कि प्रभुपाद एक कठिन प्रेस कॉंफ्रेंस और मास्को से लम्बी उड़ान के बाद थक गये होंगे, एक भक्त ने पूछा, "श्रील प्रभुपाद, क्या आप यहाँ थोड़ी देर बैठना पसन्द करेंगे?" और भक्त ने केफे की एक कुर्सी, मेज से परे खींच ली।

"यह कौन सा स्थान है?" प्रभुपाद ने पूछा।

"यह सड़क के किनारे का एक केफे है।" भक्त ने उत्तर दिया।

"लोग यहाँ क्या करते हैं? क्या वे यहाँ सिगरेट और शराब पीते हैं?"

"हाँ, श्रील प्रभुपाद, यह एक केफे है। यहाँ शराब मिलती है।"

"नहीं," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "गुरु ऐसे स्थान में नहीं बैठ सकते।"

जब प्रभुपाद मन्दिर पहुँचे, तो उन्होंने स्नान किया और प्रसाद ग्रहण किया। अगले दिन उन्हें लास ऐंजिलेस के लिए प्रस्थान करना था, और पेरिस में उनका एक दिन बाहरी कार्यक्रमों से भरा था। उन्होंने विश्राम किया और धर्मोपदेश के लिए वे फिर निकल पड़े।

भक्तों ने ओलिम्पिया थिएटर किराए पर लिया था; यह एक बड़ा प्रेक्षागृह था जिसमें दो हजार से अधिक व्यक्ति बैठ सकते थे। किन्तु, चूँकि भक्तों ने प्रभुपाद के भाषण का विज्ञापन केवल दो दिन पहले दिया था, इसलिए मात्र चालीस लोग आये। प्रभुपाद निरुत्साहित नहीं हुए, उन्होंने भाषण दिया और कीर्तन कराया। बाद में वे एक भेंट-वार्ता के लिए एक टी. वी. केन्द्र में गये।

प्रभुपाद जिस समय मन्दिर वापस पहुँचे, तो तड़के का एक बज रहा था। श्यामसुन्दर ने भक्तों से, जो दिन-भर प्रभुपाद के साथ थे, कहा कि उठने के पहले उन्हें पूरे छह घंटे विश्राम कर लेना चाहिए। किन्तु अगले दिन सवेरे प्रभुपाद नित्य की तरह उठ गये, और पाँच बजे, उन्होंने पूछा कि मंगल-आरती क्यों नहीं हो रही थी। उन्होंने अपने भक्तों को जगाने के लिए अपने सेवक को भेजा और जिस समय भक्तजन प्रात:काल की पूजा के लिए मन्दिर-कक्ष की ओर भाग रहे थे, उस समय प्रभुपाद प्रात: भ्रमण के लिए निकल पड़े।

प्रभुपाद के प्रात: भ्रमण में उनके साथ श्यामसुन्दर, अरविंद और पेरिस मन्दिर का अध्यक्ष, हरिविलास थे। वसंत ऋतु की सवेरे की धूप निकली थी और हाथ में छड़ी लिए हुए प्रभुपाद कुलीन लग रहे थे। "श्यामसुन्दर," प्रभुपाद ने पूछा, "सभी गृहस्थ माया में क्यों फँसे हैं?" जब श्यामसुन्दर उत्तर नहीं दे सका तो प्रभुपाद ने कहा, "ठीक है। माया में फँसे होना—यही उनकी स्थिति है।"

उन्होंने कहा कि जब वे अमेरिका गये थे, तो उनकी योजना लोगों को संन्यासी बनाने की थी, लेकिन जब पश्चिम में उन्होंने स्त्री-पुरुषों का स्वतंत्र मिलना-जुलना देखा, तो उन्होंने निर्णय लिया कि पहले उनके शिष्यों को विवाह करके एक बच्चा पैदा करना था, और तब पत्नी बच्चे के साथ वृन्दावन जा सकती थी और पति संन्यास ले सकता था। प्रभुपाद हँसने लगे। मनुष्य अपने परिवार में फँस जाता है—उन्होंने कहा, उसके लिए घर, बैंक का खाता, उसके पालतू पशु और इस तरह बहुत से बन्धन होते हैं।

अपने भ्रमण के अन्त में प्रभुपाद विशेषकर पेरिस के बारे में बोले। "यहाँ तीन बातें प्रमुख हैं," उन्होंने कहा, "सुरा, सुन्दरी और धन। तुम क्या सोचते हो, हरिविलास? क्या

यह सच है?"

हरिविलास ने उत्तर दिया, "हाँ, प्रभुपाद, निश्चय ही यह सच है—सुरा, सुन्दरी और धन।"

प्रभुपाद बोले कि यद्यपि ये बन्धन बड़े शक्तिशाली थे, पर कृष्णभावनामृत आन्दोलन उनके प्रभाव पर विजयी हो सकता था।

प्रभुपाद ने कहा कि पेरिस के उपनगर के मकान अपने आकर्षक घेरे वाले प्राँगणों के साथ बहुत सुन्दर थे। किन्तु हर वस्तु का इन्द्रियतृप्ति के लिए विनाश हो रहा था। एक फ्राँसीसी भद्रजन के पास प्रथम श्रेणी का मकान, उद्यान, स्त्री, बैंक का खाता, मोटरकार—सब कुछ हो सकता था, किन्तु उसके पास आध्यात्मिक ज्ञान नहीं था। इसलिए वह सदैव अपने प्रथम श्रेणी के आधिपत्यों से बंधा रहेगा और जीवन के अन्त में इस बन्धन के कारण उसे उसी घर में तिलचटा, चूहा या कुत्ता होकर जन्म लेना हो सकता है।"

जब प्रभुपाद और भक्त भ्रमण कर रहे थे, उसी समय प्रभुपाद ने हरिविलास से पूछा कि उसके विचार में मन्दिर का धर्मोपदेश कैसा चल रहा था। हरिविलास बोला कि उसे सफलता होगी, पर अतिरिक्त आय के लिए शायद यह अच्छा होगा, कि कोई व्यवसाय शुरू किया जाये।

"तुम्हारा व्यवसाय धर्मोपदेश करना है," प्रभुपाद ने कहा, "यदि कोई गृहस्थ हों, तो वे व्यवसाय कर सकते हैं।"

जब प्रभुपाद और उनके दल के लोग मन्दिर पहुँचे, तो उन्होंने पाया कि भक्तजन प्रभुपाद के सवेरे के *भागवत* व्याख्यान के लिए उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे। लेकिन समय नहीं था। प्रभुपाद को तुरन्त हवाई अड्डे के लिए प्रस्थान करना था। वे अमेरिका जा रहे थे। ●